चन्दामामा
जुलाई १९८२

जादू का पुल :
किसी से कहो कि दो गिलासों के बीच ऊपर रखे हुए कागज के टुकड़े पर गिलास टिका कर दिखाये।

रहस्य :
कागज को पंखे की मोड़ जैसा मोड़ो। इस से यह इतना मजबूत हो जायेगा कि गिलास का वजन संभाल लेगा।

गायब होनेवाली पेंसिल :
एक रूमाल लो। उसके नीचे एक पेंसिल रखो। रूमाल को झटक के उछाल दो— पेंसिल गायब!

रहस्य :
रूमाल के नीचे पेंसिल रखते समय तर्जनी (अंगूठे के बगल वाली उंगली) को ऊपर उठाकर इस तरह रखो कि लगे जैसे रूमाल पेंसिल पर ही टिकी है। ठीक उसी समय पेंसिल को अपनी कमीज की बांह में खिसका दो। रूमाल झटकते ही पेंसिल गायब हो जायेगी।

4 सिक्कों के 5 सिक्के बनाओ :
एक मेज पर अपने सामने चार सिक्के फैला दो। उन्हें फिर गिन दो ताकि निश्चित हो जाये कि मेज पर केवल चार ही सिक्के हैं।

अब सिक्कों को मेज पर से खिसका कर हटाओ और–लो–ये पांच हो गए!

रहस्य :
पांचवां सिक्का मेज के नीचे है जिसे तुमने साबुन से चिपका रखा था। मेज पर से सिक्के बटोरते समय मेज के नीचे छिपाये गए सिक्के तक अपनी उंगली ले जाओ और पांचवां सिक्का हथेली में ले लो। इसे कहते हैं हाथ की सफ़ाई!

इस तरह से विचित्र हाथ की सफाई के करतबों से अपने दोस्तों को अचंभे में डालो। इसे करना बहुत आसान है लेकिन इस पर विश्वास करना कठिन!

एक और जादू है जिसे भी तुम बहुत आसानी से कर सकते हो। अपने नाम से स्टेट बैंक में एक बचत खाता खोल लो। तुम्हारी उम्र यदि 10 वर्ष से कम है तो अपने डैडी से कहो कि तुम्हारे लिए खाता खोल दें। अपना जेब खर्च और उपहार में मिलने वाले रुपये उसमें जमा करते जाओ। फिर देखो, जैसे-जैसे तुम बढ़ोगे, वैसे-वैसे तुम्हारे रुपये भी दुगुने, तिगुने होते जायेंगे।

खेल-खेल में भी बचत हो सकती है!

स्टेट बैंक
सुरक्षा : एक सुखद अनुभूति

मेरिट लिस्ट में वही बच्चा आता है जिसका मानसिक विकास औरों से बेहतर होता है...और बेहतर मानसिक विकास के लिए उसे चाहिए...

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक

VOL. I, II, & III

प्रत्येक भाग में लगभग 200 प्रश्न

मानव-शरीर, जीव-जन्तु, धरती-जल-आकाश, खनिज, खेल-खिलाड़ी, सामान्य ज्ञान, भौतिक-रसायन व जीव विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान तथा वैज्ञानिक आविष्कारों से संबंधित अनगिनत प्रश्न.

प्रश्नों में से कुछ की झलक :

भाग I • प्लास्टिक सर्जरी क्या है ? • महिलाओं की दाढ़ी क्यों नहीं होती ? • क्या दैत्याकार मनुष्य भी पृथ्वी पर रहते हैं ? • माउंट एवरेस्ट का नाम कैसे पड़ा ? • कार्टून की शुरुआत कैसे हुई ? • झील कैसे बनती है ? • समुद्र व पृथ्वी के पहाड़ कैसे बने ? • शनि ग्रह के छल्ले क्या हैं ? • हम चलते हैं तो चांद हमारे साथ क्यों चलता है ? • क्या अन्य ग्रहों से लोग पृथ्वी पर आते हैं ? • बिजली का आविष्कार कैसे हुआ ? • पनडुब्बी का आविष्कार कैसे हुआ ?

भाग II • क्या संसार में नरभक्षी लोग भी रहते हैं ? • दूध का रंग सफेद क्यों दिखाई देता है ? • आकाश नीला क्यों दिखाई देता है ? • विज्ञापन पट्ट कैसे चमकते हैं ? • बरसने वाले बादल काले क्यों दिखाई देते हैं ? • हाइड्रोजन बम क्या है ? • बाल पाइन्ट पेन का आविष्कार कैसे हुआ ? • डार्विन का विकासवाद क्या है ? • हाथ मिलाने का सिलसिला कैसे शुरू हुआ ? • बच्चों को पोलियो कैसे हो जाता है ? • स्तनधारी माता के शरीर में दूध कैसे बनता है ? • मल हमारे शरीर में कैसे बनता है ? • हमारा एक पैर दूसरे से बड़ा क्यों है ? • हमारी आंखें दो क्यों हैं ? • खून का रंग लाल क्यों होता है ? • तोता और मैना आदमी की आवाज में कैसे बोल लेते हैं ? • सांप के काटने से शरीर में जहर कैसे फैलता है ? • मछलियां पानी में सांस कैसे लेती हैं ? • व्हेल को मछली क्यों नहीं माना जाता ? • मकड़ी अपने बनाये जाल में खुद क्यों नहीं फंस जाती ? • क्या समुद्रों में भी नदियां बहती हैं ? • आने वाले मौसम का पता कैसे लगाते हैं ? • तारापुंज क्या है ? • क्या शतरंज का खेल भारत में आरम्भ हुआ था ? • क्रिकेट के खेल की शुरुआत कब हुई ?

भाग III • हमारे मुंहासे क्यों हो जाते हैं ? • टेस्टट्यूब बेबी क्या है ? • पहाड़ों की चोटियों पर पेड़ पौधे क्यों नहीं उगते ? • मिस्र के पिरामिड क्यों बनाये गये ? • हमें सपने क्यों दिखाई देते हैं ? • डर के कारण हमारा रंग सफेद क्यों हो जाता है ? • मौत की घाटी क्या है ? • हम क्यों हंसते हैं ? • संगीत में सात सुर ही क्यों होते हैं ? • मरने के बाद भी आदमी के बाल क्यों बढ़ते रहते हैं ? • क्या कोई पहाड़ी भी रंग बदल सकती है ?

बच्चे का बौद्धिक विकास तभी बेहतर होता है, जब पाठ्य-पुस्तकें पढ़ने के अतिरिक्त, उसके मस्तिष्क में उभरने वाले 'क्यों ?' और 'कैसे ?' क़िस्म के सैकड़ों-हज़ारों प्रश्नों के समुचित उत्तर उसे सही समय पर मिलते रहें ? और ऐसे ढेरों अनबूझे प्रश्नों के सही उत्तरों के लिए उसे चाहिए...

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक VOL. I, II, & III

सामान्य ज्ञान की अन्य पुस्तकों से परे हट कर अपने किस्म की एक अनूठी ज्ञानवर्धक सीरीज़

Now on sale
English Edition of
VOL. I, II, & III
Price and pages same

प्रथम भाग के तमिल, कन्नड, मराठी, गुजराती, बंगला व तेलगु संस्करण भी प्रकाशित हो चुके हैं।

From the makers of Rapidex English Speaking Course

Postage FREE on any 2 Books

सभी पुस्तकें प्रमुख बुक सेलरो, ए. एच. व्हीलर के रेलवे तथा अन्य बस अड्डों पर स्थित बुक स्टालों पर मिलती हैं।

पुस्तक महल® खारी बावली, दिल्ली-110006
10-B, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110002

Vandana/PM/H-48

LIKE TO FLY INTO THE EXCITING WORLD OF ADVENTURE AND HUMOUR?
DOLTON
SUPER COMICS
CAN TAKE YOU THERE
EVERY FORTNIGHT!
IT COSTS ONLY Rs.2.00 A COPY –
EVIDENTLY THE MOST EASILY
AVAILABLE COMICS MAGAZINE
YOU'VE EVER READ:
ITS 32 FULL COLOUR PAGES TAKE YOU
THROUGH MYSTERY AND EXCITEMENT TO A
RENDEZVOUS WITH THE SUPER HEROES —
SUPERMAN
&
BATMAN
DOLTON COMICS
DC
DOLTON PUBLICATIONS
MADRAS 600 026

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी' संचालक : नागिरेड्डी

इस मास की बेताल कथा 'दो महा कवि' का आधार "वसुंधरा" की कहानी है। दान-पुण्य और तीर्थाटन आदि किसी भी मानव के द्वारा धार्मिक भावना और श्रद्धा-भक्ति से प्रेरित होकर अपने प्रति शत्रु-भाव रखने वाले का अपमान करने के लिए इन कार्यों का आचरण करना कैसे हास्यास्पद होता है, यह बात हमें तीर्थाटन का फल नामक कहानी से विदित होती है। जून अंक से चन्दामामा के सारे पुष्ठ पूर्णरूप से रंगीन हैं। पाठकों ने इस पर ध्यान दिया होगा।

अमर वाणी

अर्थहानि श्चावमतिः, गृहच्छिद्रादिकं तथा,
वैंचना वैंचनावाप्ति, नंप्रकाशनि सर्वदा॥

[धन की हानि, अपमान, परिवारिक कलह अथवा परस्पर धोखा खाने पर भी उन्हें दूसरों पर प्रकट नहीं करना चाहिए, याने गुप्त रखना चाहिए।]

वर्षः ३५ जुलाई १९८३ अंकः ११

एक प्रतिः २-०९ :: वार्षिक चन्दाः २८-००

सच्चा आभूषण

रात के आठ बजे के लगभग अचानक जोरों की वर्षा शुरू हो गई। घर के अन्दर पानी आने लगा। इसलिए दामोदर शर्मा ड्योढी के दरवाजों के साथ खिड़कियों के किवाड़ भी बंद करके भीतर चला आया। तूफान की आवाज और बादलों की गर्जन सुन कर उसकी छः साल की बेटी ऊर्मिला डर गई और अपनी माँ से चिपक कर बैठ गई।

"डरो मत बेटी !" यह कह कर दामोदर ने ऊर्मिला को अपनी गोद में ले लिया। तभी किसी के द्वारा दरवाज़े पर दस्तक देने की आहट सुनाई दी।

दामोदर ने उठकर दरवाज़ा खोला। पानी में भीगकर काँपते हुए सत्यवर्मा एक और व्यक्ति के साथ घर के अन्दर आया। सत्यवर्मा को देखते ही ऊर्मिला का डर जाता रहा, उलटे वह हँस पड़ी। सत्यवर्मा और दामोदर बचपन के दोस्त हैं। वह शहर में नौकरी करता है।

दामोदर उत्साह में आकर बोला- "गायत्री, देखो, तुम्हारा भैया आया है।"

आगंतुकों को कांपते देख गायत्री ने सूखे कपड़े ला दिये।

सत्यवर्मा ने कपड़े बदल लिया, फिर ऊर्मिला को अपनी गोद में लेकर बोला- "मैं एक जरूरी काम से रंगपूर जा रहा था, रास्ते में इस कोदण्डराम से मुलाक़ात हो गई। यह मेरे ही शहर का निवासी है।" यों कह कर दामोदर ने कोदण्ड राम का परिचय कराया।

गायत्री ने मेहमानों के लिए गरम-गरम खाना तैयार किया। खाने के बाद उन के वास्ते दालान वाले कमरे में बिस्तर लगा दिया।

ऊर्मिला ज़िद करके बोली- "मैं भी कहानियाँ सुनते हुए मामाजी के बिस्तर पर सो जाऊँगी।"

विमला गर्ग

“नहीं, नहीं, अभी काफी रात बीत चली है। मामाजी यात्रा से थकेमाँदे हैं ! अब तुम कहानियाँ क्या सुनोगी ? चलो।” गायत्री खीझ कर बोली ।

“कोई बात नहीं, बहन ! वह तो एक कहानी ही सुनते-सुनते सो जायेगी।” दामोदर बोला ।

ऊर्मिला सत्यवर्मा की बगल में लेट गई। उसके मुँह से कहानियाँ कुनते घंटे भर में सो गई। सत्यवर्मा भी थकावट के मारे जल्दी ही सो गया। आंखें खुलीं तो देखा, सवेरा हो गया है ।

तब तक कोदण्डराम जाग चुका था और जाने की तैयारी में था। उस ने सत्यवर्मा से पूछा- “तुम थोड़ी देर और रुकना चाहते हो या मेरे साथ चलोगे ?”

“ऊर्मिला जग गई तो उसके साथ चलने का हठ कर बैठेगी,” यह सोचकर वह भी कोदण्डराम के साथ चल पड़ा ।

नींद टूटने पर ऊर्मिला “सत्यवर्मा मामा कहाँ हैं” पूछते हुए सारे घर में उसकी खोज करने लगी ।

गायत्री ऊर्मिला को नहलाने केलिए पिछ वाड़े में ले जाते हुए बोली- “सत्यवर्मा मामा तुम्हारे वास्ते खिलौने लाने केलिए बाज़ार गये हैं ।”

नहलाते वक्त ऊर्मिला के गले में माला न देख वह घबरा गई। गायत्री की सास ने बड़े प्यार से उसे तीन तोले की सोने की माला बन वाई थी, सो ऊर्मिला के गले से गायब थी। पिछले दिन शाम को ही ऊर्मिला के जिद करने पर संदूक से निकाल कर गायत्री ने उसके कंठ में पहना दी थी ।

गायत्री ने दालान वाले कमरे में जाकर माला की खोज की। पर कहीं पता नहीं चला। गायत्री की आँखों में आँसू आ गये। सास ने अपनी सोने की चूड़ियाँ गलवा कर गायत्री की शादी के समय उसे माला बनवाकर दी थी। अब उसके गायब हो जाने का समाचार

सुनकर वह कितनी दुखी होगी ? हाल ही में उन्होंने चिट्ठी भी लिखी है कि मैं अपनी नातिन को देखने केलिए एक हफ्ते के अन्दर आने वाली हूँ ।

अपनी पत्नी के मुँह से माला गायब होने की खबर सुन कर दामोदर ने भी उसकी खोज में घर का कोना-कोना छान मारा ।

गायत्री दुखी होकर बोली- "रातों रात माला का गायब हो जाना बड़े आश्चर्य की बात है ! कहीं भैया ने यह सोच कर कि माला ऊर्मिला के कंठ में चुभ जाएगी, निकाल कर छिपा तो नहीं दी ?"

दामोदर के मन में भी यही एक आशा बनी रही । दो दिन बाद लौटती यात्रा में सत्यवर्मा ऊर्मिला के वास्ते खिलौने लेकर आ पहुँचा ।

दामोदर ने सत्यवर्मा को सारा किस्सा सुना कर कहा- "हमने सोचा था कि शायद तुमने माला छिपा दी हो ।"

सत्यवर्मा थोडी देर तक सोचता रहा, फिर बोला- "यह करतूत अवश्य कोदण्डराम की होगी !"

"क्या वह ऐसा दुष्ट है ?" दामोदर ने अचरज के साथ पूछा ।

"उसके साथ मेरी थोडी बहुत ही जान पहचान है, लेकिन गहरी दोस्ती नहीं है । तुम साथ चलो, उसके घर जाकर पूछ लेंगे । जरूरत पड़ने पर धमकी देकर माला पाने की कोशिश करेंगे ।" सत्यवर्मा ने कहा ।

शहर पहुँचते-पहुँचते दोपहर हो गई । खाना खाकर आराम करने के बाद वे दोनों कोदण्ड राम के घर गये । उस वक्त कोदण्ड राम अपने आंगन में सब्जी की क्यारियों में पानी सींच रहा था । वह अचानक सत्यवर्मा और दामोदर को देख सहम गया, फिर संभलकर बोला- "आइये, अन्दर आ जाइये ।"

सत्यवर्मा बोला- "यहाँ पर सिपाइयों का अफसर दारोगा दामोदर का मौसेरा भाई है । दामोदर उनके घर किसी उत्सव में आये हुए हैं । ये तुमको देखना चाहते थे, इसलिए तुम्हारे घर

ले आया।"

कोदण्डराम ने उनको बैठाया, फिर भीतर जाकर पत्नी से पूछा- "बेटी कहाँ है ?"

"वह तो खेलने केलिए गई है।" पत्नी के मुँह से यह जवाब सुनकर कोदण्डराम घबरा कर बोला- "तुम अभी पिछवाडे के रास्ते में जाकर बेटी के गले में पड़ी माला उतार कर ले आओ।"

"ऐसी जल्दी क्या आ पड़ी है ? अंधेरा हो जाने पर वह आ ही जायेगी ?" कोदण्ड राम की पत्नी ने जवाब दिया।

"मुझ से बहस न करो, मेरे कहे मुताबिक् करो।" कोदण्डराम अपनी पत्नी पर खीझ उठा !

पंद्रह-बीस मिनट के अन्दर वह लौट आई और रोते हुए बोली- "हाय राम। हमारा घर उजड़ गया। गली में खेलने वाले बच्चे बताते हैं कि कोई लंबी दाढ़ी वाला हमारी बेटी को मिठाई का लालच देकर अपने साथ ले गया है। बेटी के गले की माला हड़पने केलिए ही उसने ऐसा किया होगा।"

माला की बात सुनते ही कोदण्डराम का चेहरा सफेद पड़ गया। पर उसकी पत्नी काफी रो-धो रही थी, इसलिए उसने इस ओर ध्यान नहीं दिया।

सत्यवर्मा बीच में दखल देकर बोला-

"बच्चों के गले में माला डालकर खेलने के लिए जाने देना ज़ान-बूझ कर खतरा मोल लेना है। उस माला का हुलिया बताओ, पुलिस थाने में रपट करेंगे।"

रपट की बात सुनते ही कोदण्डराम काँप उठा। ऊर्मिला के गले से माला चुराने की बात अब खुल जाएगी ! यह बात अगर थाने में प्रकट हो जाएगी, तो उसे क़ैद की सजा भोगनी पड़ेगी।

यों सोच कर कोदण्डराम दामोदर के हाथ पकड़ पर कांपते स्वर में बोला- "आप मुझे क्षमा कर दीजिए। मेरी बेटी के गले की माला तुम्हारी बेटी ऊर्मिला की है। उस दिन रात को

मैं ने उसे चुरा लिया था। मेरी पत्नी रोज मुझ पर दबाव डाल रही थी कि मैं अपनी बेटी केलिए सोने की एक माला बनवा कर दूँ। माला बनवाने की सामर्थ्य मैं नहीं रखता। इसलिए यह पाप कर बैठा। कृपया थाने में रपट नहीं कीजिएगा। प्रतिष्ठा मेरे लिए प्राणों के समान है।''

दामोदर शांत स्वर में बोला- '' सुनो कोदण्ड, जब तुम अपनी पत्नी को समझा न पाओगे, तो ऐसी हालत में ऐसे ही अनर्थ हुआ करते हैं। बच्चों का सच्चा आभूषण शिक्षा है। लेकिन बचपन से ही बच्चों के मन में सोने के प्रति आकर्षण या शौक पैदा करना बेवकूफी है। चलो, पहले हम तुम्हारी बेटी की खोज करे। न मालूम उसपर क्या बीत रही है ?''

इतने में मिठाई की पोटली के साथ कोदण्डराम की बेटी लौट आई। उसके गले में ऊर्मिला की सोने की माला दीखते ही कोदण्डराम की पत्नी खुशी में आकर बोली- ''मुन्नी, तू कहाँ गई थी ? हमने सोना कि दाढ़ी वाला सोने की माला के लालच में तुम को उठाकर ले गया होगा।''

कोदण्डराम को मिठाई की पोटली दिखा कर उसकी बेटी बोली- ''वे मामाजी, नये नये अभी इस शहर में नौकरी के काम पर आये हैं। वे कहते थे कि देखने में मैं उनकी बेटी जैसी हूँ। थोडी देर तक मेरी बातें सुनकर मुझ को मिठाई खरीद कर दे दी है।''

कोदण्डराम की पत्नी अपनी बेटी के गले से माला निकालकर दामोदर के हाथ देकर बोली- ''मैं ने नहीं सोचा था कि मेरी मूर्खता उनको चोर बनने को बाध्य करेगी ! बच्चों केलिए सोना नहीं, बल्कि उनके स्वर्णिम भविष्य केलिए शिक्षा स्वर्ण जैसी है, यह बात मैं ने आज आप के मुँह से सीख ली है।''

दामोदर ने माला को अपनी जेब में डाल लिया। कोदण्डराम की बेटी को प्यार से गोद में लेकर बोला- ''अपनी अपनी संपत्ति हमें मिल गई है।''

तीन पांत्रिक

२

[पूर्व कथा - अवंतीनगर में तीन भाई रहा करते थे। एक बार सबसे छोटा भाई पिंगल मछलियाँ पकडने के लिए तोतेवाले सरोवर पर गया। वहाँ पर मण्डन नामक एक व्यक्ति आया और उसने छोटे भाई से कहा कि मेरे हाथ बांध कर मुझे सरोवर में डाल दो। पिंगल ने वैसा ही किया और शहर में जाकर कांचन मिश्र नामक व्यापारी से एक सौ अशर्फ़ियाँ ले ली। ...इसके बाद]

कांचन मिश्र से अशर्फ़ियाँ पाकर पिंगल बड़ा खुश हुआ और दुकानदार के पास पहुँचा। दुकानदार ने पिंगल को देखते ही भांप लिया कि वह बहुत ही प्रसन्न है, उस से पूछा- "पिंगल लगता है कि आज तुम्हारी क़िस्मत खुल गई है, क्या आज ज्यादा मछलियाँ फंस गई ?"

उत्साह में आकर पिंगल ने सोचा कि उसे जो सौ अशर्फ़ियाँ प्राप्त हुई हैं, उसकी कहानी उसे सुना दे। लेकिन दूसरे ही क्षण उसे कांचन मिश्र की चेतावनी याद हो आई, वह चिन्तित मुद्रा बना कर बोला- "दस दिन बाद आज ही जाल में मछलियाँ फँसी हैं। लगता है, पिछले दस दिन से दुर्भाग्य मेरा पीछा कर रहा था।"

इसके बाद पिंगल ने पिछले दस दिन का हिसाब कर दुकानदार को चुकाया और आवश्यक सामान ख़रीद कर घर चला गया। घर पहुँच कर उसने देखा कि उसके दोनों बड़े

सारा वृत्तांत सुनकर माँ ने समझाया- "बेटा, तुम्हारा यह काम अगर किसी पर प्रकट हो गया, तो तुम ख़तरे में फंस जाओगे। आंइदा तुम तोते वाले सरोवर की ओर मत जाओ, बेटा।"

माँ को घबराया हुआ देख पिंगल ने कहा- "माँ, मैं ने अपराध थोड़े ही किया है ? उस आगंतुक ने अपनी इच्छा से हाथ बंधवाया और सरोवर में डूब मरा। फिर भी यह ख़बर अत्यंत गुप्त रखी जा सकती है।"

"तुम्हें तो अपने बड़े भाइयों की बात मालूम ही है। वे दुष्ट स्वभाव के हैं। उनके कानों में यह खबर न पहुँचे, इतनी सावधानी तो तुम्हें रखनी ही होगी।" माँ ने समझाया।

इधर दस दिन बाद उस रात को पिंगल गहरी नींद सोया। दूसरे दिन सवेरे जाल लेकर वह तोते वाले सरोवर की ओर चल पड़ा। दोपहर तक जाल में एक भी मछली न फंसी। हताश होकर वह घर लौटने की सोच रहा था, तभी उसे थोड़ी दूर पर तेज गति से उसकी ओर बढ़ता हुआ एक घुड़सवार दिखाई दिया।

पिंगल चौकं पड़ा। घुड सवार ठीक मण्डन जैसा दीख रहा था। पिंगल को ऐसा मालूम हुआ कि कहीं सरोवर में डूबने वाला व्यक्ति पिशाच बनकर तो नहीं आ रहा है। इतने में घोड़ा उसके समीय आ गया। घुड़ सवार हँसते हुए घोड़े पर से उतरा और बोला- "पिंगल, तुम

भाई दीवार से सट कर ऊँघ रहे हैं ! उस की माँ सामने आकर खड़ी हो गई।

पिंगल दूकान से लाई गई चीज़ें माँ के हाथ देकर बोला- "माँ, जल्दी रसोई बनाओ।"

थोड़ी ही देर में माँ ने रसोई तैयार कर दी। पिंगल के साथ जीवदत्त और लक्षदत्त ने भी जल्दी-जल्दी खाना खाया तथा दोनों उत्साह पूर्वक घर से निकल पड़े। बड़े भाइयों के बाहर जाते ही पिंगल ने जेब से अशर्फ़ियाँ निकालकर अपनी माँ को दिखाया।

पिंगल की माँ अचरज में आ गई और पूछा- "बेटा, तुमने इतना धन कैसे कमाया ?"

पिंगल ने सारा किस्सा माँ को सुनाया।

को मेरी एक मदद करनी होगी ।"

पिंगल ने भयभीत होकर उसकी ओर देखा । आगंतुक घुड़सवार की आकृति मण्डन जैसी ही थी । लेकिन उम्र में यह उस से थोड़ा छोटा लग रहा था । घोड़े का रंग भी भिन्न था । इस पर पिंगल के मन में इस बात की हिम्मत बंध गई कि वह आगंतुक व्यक्ति कोई पिशाच नहीं है ।

पिंगल ने उस व्यक्ति से पूछा- "मेरा नाम आप को कैसे मालूम है ? मुझ से आप कैसी सहायता चाहते हैं ?"

यह प्रश्न सुनकर घुडसवार खिल-खिला कर हँस पड़ा और बोला- "पिंगल, तुम से यह बात छिपी नहीं है कि तुम्हारा नाम मैं कैसे जानता हूँ और मैं किस काम से यहाँ पर आया हूँ ।" फिर भी तुम्हारी शंका का निवारण करने केलिए मैं अपना परिचय देता हूँ । सावधानी से सुन लो- "मेरा नाम अनुरूप है, तुम्हारी मदद केलिए इसके पूर्व आया हुआ मण्डन मेरा भाई है । मैं भी तुम से वैसी ही मदद पाना चाहता हूँ, जैसी मदद तुमने मेरे बड़े भाई को पहुँचाई ! समझें !"

"क्या मण्डन तुम्हारे भाई हैं ? वे इस वक्त कहाँ पर हैं ?" पिंगल ने पूछा ।

अनुरूप हँसते हँसते लोट-पोट हो गया, फिर सरोवर के मध्य भाग की ओर उँगली का इशारा करके बोला- "संभवतः मंण्डन वहाँ पर होगा, या अब तक जलचरों का आहार बन गया होगा ! वह आइंदा हमें कभी दिखाई नहीं देगा । ऐसी जगह वह पहुँच गया है ।"

"तब तो कल यहाँ पर जो कुछ हुआ, उसकी तुम्हें पूरी जानकारी है ।" पिंगल ने कहा । "हाँ, हाँ, मैं सब कुछ जानता हूँ ! तुम से मैं भी वही मदद चाहता हूँ ।" अनुरूप ने कहा ।

"मैं मदद अवश्य दूँगा, पर मेरी मदद केलिए इस बार दो सौ अशर्फ़ियाँ चुकानी पड़ेंगी ।" पिंगल ने शर्त रखी ।

अनुरूप ठठाकर हँस पड़ा । फिर पिंगल के कंधे पर थपकी देते हुए बोला- "पहले ही मेरे मन में संदेह था कि संभवतः तुम इस बार दो सौ

अशर्फ़ियाँ माँग बैठोगे। इसीलिए मैं पहले ही कांचन मिश्र के यहाँ इस का प्रबंध करके आया हूँ। लेकिन तुम यह क्यों सोचते हो कि मैं सरोवर से प्राणों के साथ बाहर नहीं निकल सकता? और मण्डन की तरह सरोवर में डूब कर जलचरों का आहार बन जाऊँगा?"

इस के बाद पिंगल ने रस्सी से अनुरूप के हाथ बांध दिये तथा, उस को कँधे पर उठा ले जाकर सरोवर में फेंक दिया। सरोवर में गिरने के पूर्व अनुरूप बोला- "पिंगल, याद रखो, अगर पहले मेरा सर पानी पर तिर गया तो तुम तुरंत पानी में जाल फेंक कर मुझ को बाहर निकाल लेना। वरना तुम अपने रास्ते चलते बनो और कांचन मिश्र से अपनी रक़म वसूल कर लो।"

पिंगल जाल लेकर सरोवर के किनारे पर तैयार हो खड़ा हो गया। सरोवर में थोडी देर तक लहरों पर पानी के बुलबले उठे, फिर बंद हो गये। एक-दो मिनट बाद छोटे-छोटे बुलबले उठे, फिर अनुरूप के पैर पानी पर तिर गये।

"बेचारा मर गया!" पिंगल के मुँह से अनायास ही ये शब्द निकल पड़े। इसके बाद पिंगल अनुरूप के घोड़े पर सवार हो गया और पीछे की ओर मुड़ कर देखे बिना शहर की ओर चल पड़ा। कुछ दूरी पर पिंगल को देखते ही कांचन मिश्र जोर से चिल्ला उठा- "लालच बुरी बलाय!" फिर पिंगल के समीप आने पर उसने उसके हाथ दो सौ अशर्फ़ियाँ गिनकर दे दीं।

"लालच किसका है! क्या मेरा है? क्या आप को पता है कि ये दो सौ अशर्फ़ियाँ पाने के लिए मुझे कैसी मेहनत करनी पड़ी है? आप शायद नहीं जानते कि इन अशर्फ़ियों के वास्ते मुझे अपनी मां की सलाह का तिरस्कार करना पड़ा और अपनी जान को खतरे में डालना पड़ रहा है। मेरी इस लाचारी की कहानी सुनेंगे तो शायद आप मुझ पर तरस खाते!" पिंगल ने कांचन मिश्र से कहा।

कांचन मिश्र ने अनिच्छा पूर्वक सर हिलाकर कहा- "लालच तुम्हारा नहीं, मरने वालों का है! तुम जो काम करते हो, उसके प्रकट हो

जाने पर तुम्हें जिस खतरे का सामना करना पड़ेगा, इसकी कल्पना करना कोई असाधारण बात नहीं है ! तुम्हारे अन्दर भी लालच सर उठा रहा है ! कल एक सौ और आज दो सौ अशर्फ़ियों की तुमने माँग की ! इसे लालच न कहे तो और क्या क्या जाए ? तुम्हीं बताओ न ?"

"कल तीन सौ अशर्फ़ियाँ मांगूँगा । इससे कम में मैं किसी की मदद करने केलिए तैयार नहीं हूँ ।" यों कह कर पिंगल घर की ओर चल पड़ा । उस दिन रात को पिंगल ने अपनी माँ के हाथ में दो सौ अशर्फ़ियाँ दीं । उस धन को देख पिंगल की माँ किसी अज्ञात भय से काँप उठी । उसने समझाने के स्वर में कहा- "बेटा, न मालूम क्यों मेरे मन में डर लगता है, तुम उस तोते वाले सरोवर की ओर मत जाओ ।"

"माँ, डरने की कोई बात नहीं है, मैं ने इन सारी बातों पर विचार करने के बाद ही इस खतरे को मोल लेने का निश्चय कर लिया है ! तुम बेफ़िक्र रहो ! मैं इन सारे खतरों पर विजय पाकर ही घर लौटूँगा । पर तुम इस बात को हमेशा केलिए गुप्त रखो ।" पिंगल ने कहा ।

उस दिन रात को पिंगल को नींद नहीं आई । बड़े सवेरे ही उठ कर कंधे पर जाल डाल करके पिंगल सरोवर की ओर निकल पड़ा । वैसे उसने सरोवर में जाल तो फेंक दिया, पर उसकी दृष्टि मैदान की ओर मँडरा रही थी ।

दोपहर के वक्त घोड़े की टापों से धूल उड़ाते मैदान की ओर से एक घुड़ सवार को आते हुए पिंगल ने देखा । चंद मिनटों में ही घुड़ सवार पिंगल के समीप पहुँच गया । घोड़े से उतर कर घुड़ सवार ने कहा- "पिंगल, मेरा नाम पद्मपाद है ! तुम्हें मेरी एक मदद करनी है ।"

"मैं अवश्य आपकी मदद करूँगा । इस सरोवर में गिर कर आत्महत्या करने की इच्छा रखने वाले हर एक की मदद करना ही मेरा काम है । पर मेरे इस काम के वास्ते तीन सौ

अशर्फ़ियाँ चुकानी पड़ेंगी !" पिंगल ने कहा।

"यह कौन बड़ी बात है ! अगर मैं मर जाऊँगा तो कांचन मिश्र तीन सौ अशर्फ़ियाँ दे देंगे ! इस का इंतजाम मैं पहले ही कर चुका हूँ। तुम निश्चिंत रहो ! तुम्हारी मेहनत का पारिश्रमिक तुम्हें निश्चय ही मिल जाएगा ! कौन जाने, इस घटना के द्वारा तुम्हारा जीवन ही पूर्ण रूप से बदल जाये !" यों कह कर पद्मपाद हँस पड़ा। फिर घोड़े पर लटकने वाली रस्सी खोल कर पिंगल के हाथ में दे दी।

पिंगल ने रस्सी लेकर पद्मपाद के हाथ बांध दिये, उसको अपने कंधे पर डाल कर सरोवर के किनारे पर पहुँचा, और उसे सरोवर में फेंक दिया। उसी वक्त उसके मुँह से वे शब्द निकल पड़े- "बेचारा मर गया है।" यों कह कर वह घोड़े के निकट पहुँचा।

इस बार पिंगल ने सरोवर के जल में झांक कर देखने का कष्ट नहीं किया और घोड़े पर सवार होकर ज्यों ही निकलने को तैयार हुआ, उसी समय उसको पद्मपाद की पुकार सुनाई दी- "पिंगल, तुम जल्दी पानी में जाल फेंक कर मुझ को बाहर निकालो। तुम्हें पुण्य होगा !"

पिंगल छलांग मार कर घोड़े पर से नीचे कूद पड़ा और पानी में जाल फ़ेंक कर पद्मपाद को सरोवर से बाहर खींच लिया। पद्मपाद हांफते हुए जल से बाहर निकला। उसके हाथ में मगर मच्छ के दो बच्चे थे। उन बच्चों की ओर विस्मय पूर्वक देखकर पिंगल उस से कुछ

पूछना ही चाहता था, उसी समय पद्मपाद घोड़े के समीप पहुँचा। उस पर रखी एक थैली से शीशे की एक झारी निकाली, उसके अन्दर मगर मच्छ के बच्चों को डाल कर ढक्कन बंद कर दिया।

पिंगल ने एक बार पद्मपाद और मगर मच्छ के बच्चों की ओर संदेह भरी दृष्टि से देखा और पूछा- "पद्मपाद, तुम बड़े ही भाग्यवान हो ! प्राणों से बच गये ! पर मेरी तीन सौ अशर्फ़ियों का क्या होगा ?"

पद्मपाद ने प्यार से पिंगल का आलिंगन किया, और कहा- "पिंगल, तुम्हें तीन सौ अशर्फ़ियाँ क्या...एक लाख...एक करोड़ अशर्फ़ियाँ दे दूँगा। तुम को दुनिया का सब से बड़ा धनी बना दूँगा। पर मेरी शर्त यह है कि तुमको मेरे साथ भल्लूक पर्वत तक आना होगा !"

"भल्लूक पर्वत ! उफ ! उस नाम से ही मुझको डर लगता है ! मेरी माँ ने उन पर्वतों के बारे में बहुत सारी बातें सुनाई हैं ! मैं ने सुना है कि उन पर्वतों में पिशाच निवास करते हैं !" पिंगल ने शंका प्रकट की।

"पिशाच और भूत तुम्हारा कुछ अहित नहीं कर सकते। इस दुनिया भर में केवल तीन महा मांत्रिक हैं ! उन में से दो मांत्रिकों की तुमने स्वयं इस सरोवर में बलि दे दी है। अब ज़ो बच गया है, वह मैं ही हूँ।" पद्मपाद ने कहा।

"आपकी बातें मेरी समझ में नहीं आ रही

हैं ।" पिंगल ने आश्चर्य पूर्वक पूछा ।

"मुझे तो तुम्हारी सहायता की आवश्यकता है। इसलिए उसके सारे रहस्य मैं बता देता हूँ ! सुनो।" पद्मपाद पिंगल को आगे की कहानी सुनाने लगाः

"हम तीन भाई हैं ! हमारे पिता एक महान मांत्रिक हैं ! उन्होंने अपने मंत्रों की शक्ति से अनेक लोगों का उपकार किया है और कुछ लोगों की हानि भी की है ! उन्होंने हम तीन भाइयों में से किसी के प्रति भी पक्षपात किये बिना सब को समान रूप से मंत्र विद्याएँ सिखाई है। वे जब बूढे हुए और उनका मरने का समय निकट आया, तब उन्होंने अपनी सारी संपत्ति हमें बराबर बाँट कर दे दी। लेकिन उन्होंने अपनी सारी मंत्र विद्याएँ जिस पुस्तक में लिख रखी थी वह पुस्तक किसी के हाथ सौंपे बिना यह बात कह कर मर गये कि तुम में से जो सब से ज्यादा शक्तिशाली होगा, उसी को वह पुस्तक प्राप्त होगी ।"

हमारे पिताजी के मरने के बाद हम तीनों भाइयों के बीच झगड़े शुरू हुए। हम में से प्रत्येक के मन में यह इच्छा पैदा हो गई कि उस पुस्तक को अपनी बना ले ! इस विचार से हम ने एक दूसरे पर अपनी मंत्र-शक्ति का प्रयोग करना प्रारंभ किया ।

जब हम भाई एक दूसरे का सर्वनाश करने पर तले हुए थे, तभी हमारे पिताजी को मंत्र विद्याएँ सिखाने वाले गुरु हमारे घर आये ! वे हम लोगों को झगड़ते देख बहुत दुखी हुए। तीनों को बिठाकर उन्होंने समझाया- "तुम लोग उस पुस्तक के बारे में कुछ नहीं जानते। इसीलिए आपस में लड़ते-झगड़ते हो। तुम्हारे पिताजी ने ही स्वयं बताया है न कि तुम में जो ज्यादा शक्तिशाली होगा, उसीको वह पुस्तक प्राप्त होगी ?

इसलिए उस पुस्तक में बताई गई मंत्र-शक्तियों को तुम लोग साधना चाहते हो इसके पूर्व तुम्हे बडी साधना करनी होगी ।" हमने उनसे निवेदन किया कि उस साधना का परिचय दे । उन्होंने हमें यों बतायाः(क्रमशः)

दो महाकवि

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये, पेड़ पर से शव उतार कर कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगे। इस पर शव में स्थित बेताल ने कहा- "राजन, आप की लगन और कार्य साधने का दृढ़ संकल्प प्रशंसनीय है। आप के बारे में मैं कुछ कह नहीं सकता, लेकिन अधिकांश राजा शासन के मामलों में जो अभिरुचि रखते हैं, वह कविता इत्यादि अन्य कलाओं के प्रति नहीं; फिर भी वे इस विचार से अपने दरबारों में कवि और पंडितों को आश्रय देते हैं कि वे जनता की दृष्टि में कला-प्रेमी होने का यश प्राप्त करें। इस कारण कुछ संदर्भों में साधारण कवि भी राज-सम्मान प्राप्त कर लेता है। इसके उदाहरण के रूप में मैं आप को राजा जयवर्मा की

बेताल कथा
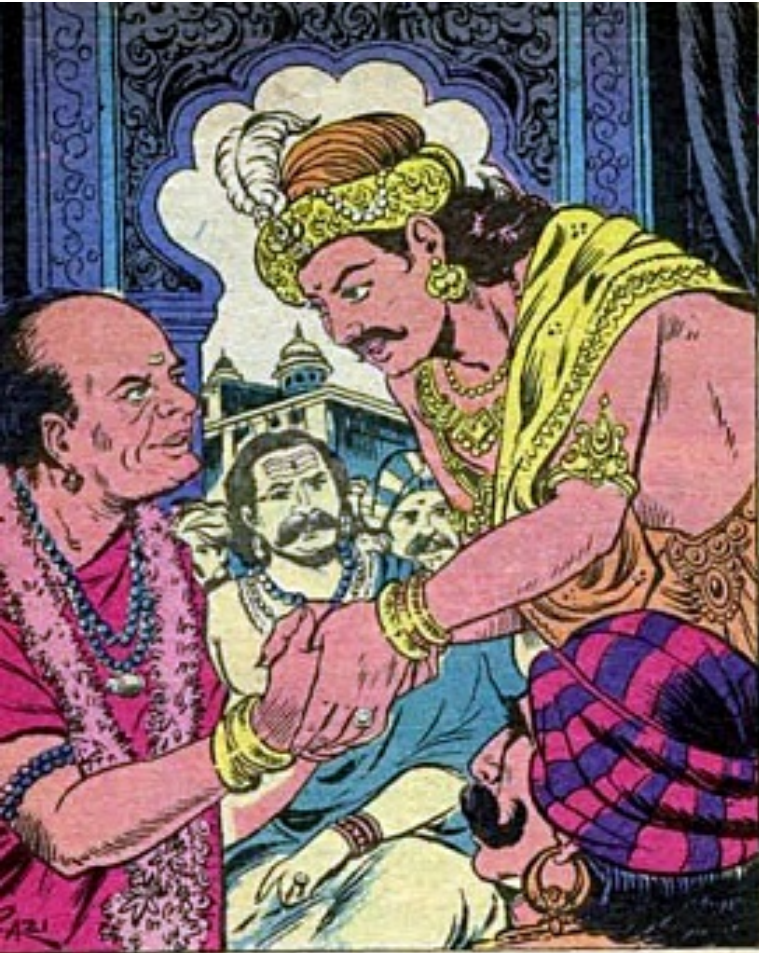
कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिए !"

बेताल यों कहानी सुनाने लगाः मालव देश के राजा जयवर्मा के दरबार में प्रति दिन कोई न कोई सांस्कृतिक कार्यक्रम हुआ करता था। एक बार एक पुराण कथा वाचक ने अपनी कथन चातुरी से सभी दरबारियों को मंत्र मुग्ध कर दिया ।

राजा जयवर्मा ने कथा वाचक का खूब सत्कार किया और बोले-"महाशय, मैं ने आप जैसे कथा वाचक को कहीं नहीं देखा है, आप मेरे दरबार की शोभा बढ़ाइये !"

इस पर कथा वाचक ने विस्मयपूर्वक उत्तर दिया- "महाराज, इस में मेरा बड़प्पन कुछ भी नहीं है। हमारे देश में नागेश्वर और गंगाधर नामक दो महाकवि हैं। वे राजाश्रय पाने केलिए नहीं, बल्कि अपने आत्म-संतोष के वास्ते कविता करते हैं ! मैं ने उन दोनों महा कवियों के काव्यों में से कुछ पद्यों का संग्रह करके इस पुराण कथा का रूप दिया है। इसलिए वास्तव में यह आदर उनको प्राप्त होना चाहिए ! मेरा बड़प्पन इस में कुछ भी नहीं है ।"

इस पर जयवर्मा के मन में यह इच्छा पैदा हुई कि उन दोनों महाकवियों को अपने दरबार में बुला भेजना चाहिए। इस विचार से राजा ने उन महा कवियों को बुला लाने के लिए दो पालकियों के साथ कुछ राज कर्मचारियों को भी भेजा । चन्द दिनों में दोनों महाकवि राजधानी में आ गये । राजा जयवर्मा ने उन दोनों के ठहरने के वास्ते अलग अलग इंतज़ाम किया। राजा ने स्वयं उनके निवासों में जाकर उन की कविता सुनी। सचमुच उन की कविता अद्भुत थी। प्रत्येक कविता में अपूर्व भाव वर्णित थे । शब्दों के चयन में संगीत की माधुरी भरी थी । पर राजा के मन में यह जिज्ञासा पैदा हुई कि नागेश्वर और गंगाधर दोनों की कविता निस्सन्देह प्रशंसनीय है, पर किसकी कविता श्रेष्ठतर है ।

राजा ने अपनी यह जिज्ञासा दरबारी कवियों तथा पंडितों के सामने प्रकट करके उन से यह अनुरोध किया कि वे दोनों कवियों के काव्य पढ़कर उनकी यह जिज्ञासा शान्त करें ।

दूसरे दिन सभी कवियों और पंडितों ने उन काव्यों को पढ़कर मुक्त कंठ से निवेदन किया- "प्रभू ! दोनों काव्यों का हमने अध्ययन किया, दोनों ही अद्भुत हैं । हम उनकी कविता पढ़ कर तन्मय हो गये हैं ! हमने अपूर्व आनंद का अनुभव किया, लेकिन इन दोनों काव्यों में से कौन महान है, यह निर्णय करने में हम असमर्थ हैं । कृपया हमें क्षमा करें ।"

कवियों और पंडितों के उत्तर सुनने के बाद राजा की उत्कण्ठा और भी तीव्र हो उठी । उन्होंने मंत्री को बुलाकर कहा- "मंत्री महोदय, क्या मेरी इच्छा की पूर्ति होने का कोई उपाय नहीं है ? नागेश्वर और गंगाधर के काव्य पढ़ कर उनका भूल्यांकन कर सकने वाले पंडित क्या हमारे देश में नहीं हैं ?"

मंत्री ने सोच-समझ कर उत्तर दिया- "प्रभू ! ये दोनों असाधारण कवि हैं । ऐसे महान कवि किसी भी देश में उंगलियों पर गिनने लायक़ होते हैं ! इसलिए उन के काव्यों का मूल्यांकन करना स्वयं उन्हीं के लिए संभव है !"

राजा जयवर्मा को यह सुझाव उचित मालूम हुआ । वे गंगाधर के द्वारा रचित दूसरा काव्य लेकर नागेश्वर के पास पहुँचे । उनके सामने अपनी जिज्ञासा प्रकट करते हुए कहा- "आप इस काव्य को पढ़कर बिना पक्षपात के अपने विचार प्रकट कीजिए । सारे देश में आप ही एक ऐसे व्यक्ति हैं जो इस का सही निर्णय करने की शक्ति रखते हैं ।"
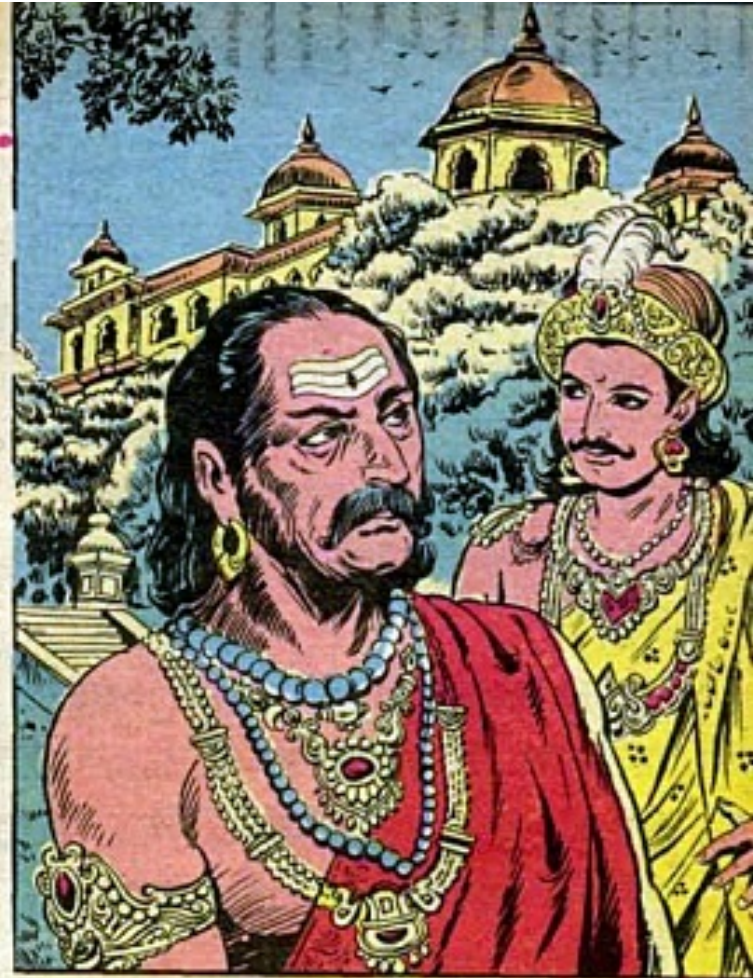
नागेश्वर ने काव्य को पढ़कर कहा- "महा राज, निस्संदेह यह एक महा काव्य है । गंगाधर मुझ से कहीं श्रेष्ठ कवि हैं ।"

नागेश्वर का यह निर्णय सुनकर जयवर्मा विस्मय में पड़ गये । इस के बाद वे नागेश्वर का काव्य लेकर गंगाधर के पास पहुँचे । सारा हाल

उन्हें सुनाकर बोले- "नागेश्वर का निर्णय सुनने के बाद मुझे भी लगा कि आप ही श्रेष्ठ कवि हैं, फिर भी मैं चाहता हूँ कि आप इस काव्य को पढ़कर नागेश्वर के बारे में अपना निर्णय दें।"

गंगाधर ने नागेश्वर के काव्य का अनुशीलन करके कहा- "प्रभु ! सचमुच यह एक महान काव्य है। नागेश्वर मुझ से कहीं अधिक श्रेष्ठ कवि हैं।"

राजा जयवर्मा की समझ में नहीं आया कि सच्चाई क्या है। उन्होंने मंत्री को सारा वृत्तांत सुना कर कहा- " मैं समझता हूँ कि इन महा कवियों की श्रेष्ठता का निर्णय करना हमारे लिए संभव नहीं है।"

मंत्री ने पल भर सोच कर कहा- "महाराज, ऐसा मालूम होता है कि ये महाकवि काव्य-रचना में ही नहीं, बल्कि विनयशीलता में भी एक दूसरे से कम नहीं, उन्हीं के मुँह से सच्ची बात निकालने केलिए हमें कोई योजना बनानी होगी ! काव्य के रचयिता का नाम बताने के कारण ये काव्य के गुण-दोषों पर अपने निजी विचार प्रकट नहीं कर रहे हैं। अपने बड़प्पन की आप चर्चा न करना एक उत्तम कवि का लक्षण है न !"

मंत्री का सुझाव राजा को बड़ा अच्छा लगा। राजा नागेश्वर का एक और काव्य लेकर गंगाधर के पास गये और बोले- "कविवर, मेरे दरबार में पद्मनाभ नामक एक भट है। प्रति दिन दरबार में कविताएँ सुनते रहने के कारण उसके अन्दर साहित्य के प्रति अभिरुचि पैदा हुई और उसने स्वयं एक काव्य रचा है। यह उसका

प्रथम काव्य है। वैसे यह काव्य मुझे पसंद नहीं आया। लेकिन साहित्य के गुण-दोषों का विवेचन करने की सामर्थ्य मैं नहीं रखता। इस काव्य के प्रति आपका विचार जानने के लिए आया हूँ।"

गंगाधर ने उस काव्य को पढ़कर कहा- "महाराज, यह काव्य एक दम साधारण है। अगर इस को कवि कहलाना है तो बड़ी साधना करनी होगी।"

इस के बाद राजा गंगाधर का एक काव्य लेकर नागेश्वर के पास पहुँचे और बोले- "महा कवि, यह काव्य मेरे सेवक पद्मनाभ ने रचा है। इस पर आप की राय बताइये।"

नागेश्वर ने काव्य का अनुशीलन करके कहा- "प्रभु, यह एक महाकवि का काव्य मालूम होता है। शब्दों के प्रयोग में संगीत की माधुरी ध्वनित हो रही है! कविता की अनुभूतियाँ अपूर्व हैं। संक्षेप में कहना हो तो आप के सेवक के मुख से सरस्वती की वाणी प्रकट हुई है।"

ये बातें सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुए। अपने महल में जाकर मंत्री को बुला भेजा और कहा- "मंत्री महोदय, हमें गंगाधर का सम्मान करना होगा। यह निर्णय हो गया कि उन दोनों में वही उत्तम कवि है।" इस के बाद सारी कहानी मंत्री को कह सुनाई।

मंत्री ने राजा के वचन सुनकर कहा- "महाराज, हमें तो गंगाधर का नहीं, नागेश्वर का सम्मान करना चाहिए।"

मंत्री की बात सुनकर राजा पल भर केलिए

विस्मय और सोच में पड़ गये ।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा- "राजन, मेरे मन में एक संदेह पैदा हो रहा है । गंगाधर क़ा सम्मान करने की इच्छा रखने वाले राजा मंत्री के द्वारा नागेश्वर का सम्मान करने की सिफारिश सुनकर नाराज़ होने के बदले सोच में क्यों पड़ गये ? जब गंगाधर को काव्य के लेखक का पता न था, तब नागेश्वर के काव्य को उस ने साधारण काव्य बताया, पर काव्य के लेखक का पता न चलने पर भी नागेश्वर ने गंगाधर के काव्य का परिशीलन करके उस को महान काव्य बताया । गंगाधर को महाकवि साबित करने केलिए यह एक उदाहरण पयप्ति है । इस शंका का समाधान जानकर भी नहीं बतायेंगे तो आप का सिर फूट कर टुकड़े-टूकड़े हो जाएगा ।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा- "इस में कोई संदेह नहीं है कि नागेश्वर और गंगाधर एक दूसरे से बढ़कर महाकवि हैं । पर उन में से किसी एक ही का सम्मान करना है तो कवि के रूप में ही नहीं, व्यक्ति के रूप में भी उन के गुणों का परिशीलन करना होगा । उन दोनों में से गंगाधर घमण्डी हैं, राजा सर्व प्रथम नागेश्वर के पास पहुँचे, उन्होंने गंगाधर को ही महाकवि बताया। पर गंगाधर के कथनानुसार नागेश्वर के काव्य को कोई भी कवि साधारण काव्य मानने को तैयार न होगा । उस काव्य की महानता को गंगाधर समझ न पाया । राजा के यह कहने पर कि वह काव्य पद्मनाभ नामक एक सेवक द्वारा रचित है, उन्होंने दिल लगा कर उस काव्य का अनुशीलन भी नहीं किया होगा । नये नये काव्य रचना करने वाले को एक महाकवि के द्वारा जरूर प्रोत्साहन मिलना चाहिए ! ऐसी उदारता और भव्यता गंगाधर के अन्दर नहीं है । इन कारणों से मंत्री के परामर्श के अनुसार राजा के द्वारा नागेश्वर का सम्मान किया जाना ही न्यायसंगत होगा ।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा ।

(कल्पित)

अनोखा सौदा
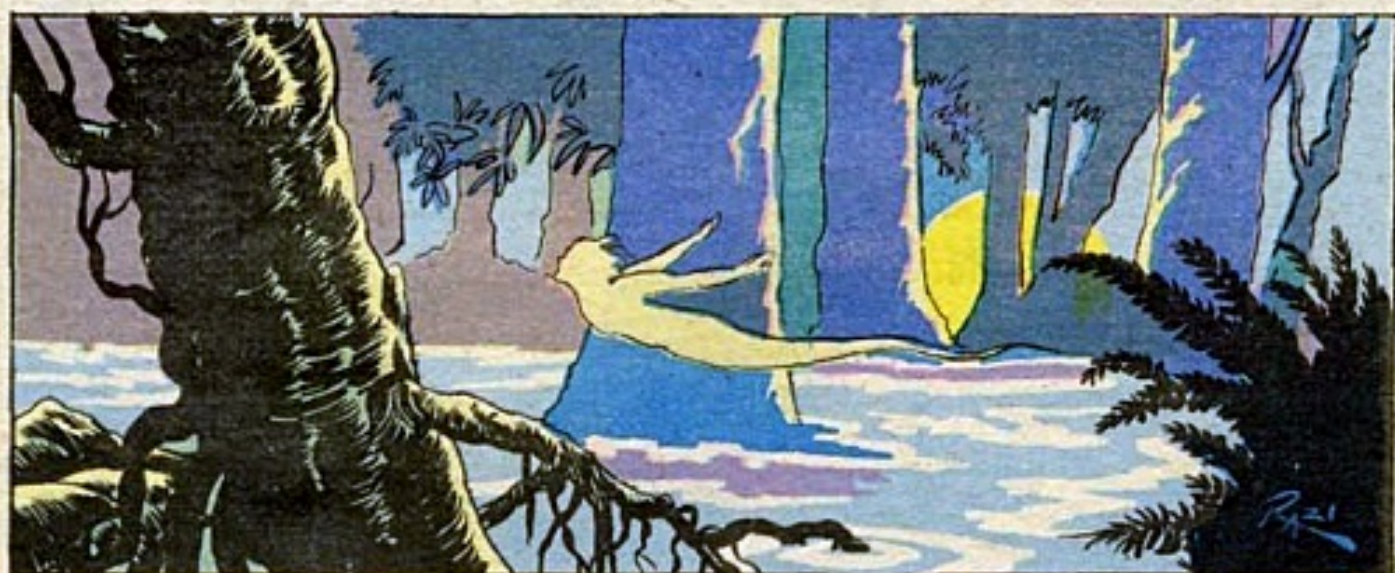
चक्रधर पुर में चन्द्रभानु नामक एक दूकानदार रहा करता था। वह पुरानी चीज़ें खरीदने व बेचने का व्यापार किया करता था।

एक दिन चन्द्रभानु जब ग्राहकों के साथ मोल-भाव में व्यस्त था, तभी रामगोपाल नामक एक व्यक्ति एक ऊनी कंबल को लपेट कर बगल में दबाये चन्द्रभानु के पास पहुँचा और पूछा- "नये ऊनी कंबल का दाम क्या हो.ा ?"

चन्द्रभानु ने खीझ कर रामगोपाल की ओर देखते हुए कहा- "यह पुरानी चीज़ें बेचने वाली दूकान है। नयी चीज़ों के बारे में तो और दूकानों में जाकर पता लगाओ।"

"मैं जानता हूँ कि यह पुरानी चीज़ें बेचने वाली दूकान है। लेकिन ऐसी वस्तुओं की क़ीमत लगाते वक्त आप इस बात की जानकारी तो रखते ही होंगे कि वैसी ही नई चीज़ का क्या दाम होगा।" रामगोपाल ने कहा।

यह जवाब सुनकर चन्द्रभानु हँस पड़ा और बोला- "मैं वैसी ही नई चीज़ के मूल्य की एक चौथाई देकर खरीद लेता हूँ। उस पर आधा रुपया या एक रुपया लाभ लेकर बेच देता हूँ। मिसाल के तौर पर तुम्हारे पास का पुराना कंबल यदि नया हो तो बीस रुपये का होगा!"

रामगोपाल ने आश्चर्य से कहा- "तो आप का ख्याल है कि इस कंबल का दाम आप पांच-छः रुपये से ज्यादा नहीं देंगे ?"

चन्द्रभानु ने कंबल को परखते हुए कहा- "इस कंबल का दाम उतना भी शायद नहीं होगा। इसका रंग भी धुल गया है, इसलिए इसका दाम चार रुपये से ज्यादा नहीं होगा!"

"मैं आखिरी दफे पूछ रहा हूँ, अंतिम दाम बताइये।" राम गोपाल ने कहा।

चन्द्रभानु ने कंबल को अपने हाथ में

गायत्री सिन्हा

लिया। उसकी तहों को खोल कर परख कर देखा और कहा- "यह बहुत ही पुराना कंबल है। इसके धागे भी निकल आये हैं। इसलिए यह तीन रुपये से ज्यादा क़ीमत का न होगा।"

रामगोपाल जेब से तीन रुपये निकालकर चन्द्रभानु के हाथ धरते हुए बोला- "आपने इसका आख़िरी दाम तीन रुपये निर्धारित किया है। मैं यह कंबल ले जाता हूँ।"

चन्द्रभानु ने उन रुपयों की ओर विस्मय के साथ देखते हुए पूछा- "यह कैसी बात है? तुम मुझे रुपये क्यों दिये जा रहे हो?"

"यह तो आप की ही दूकान का कंबल है न? यह मुझे पसंद आया। यह केवल दूकान के बाहर लटक रहा था। इसलिए मोल-भाव करके इसे ख़रीद कर ले जाने केलिए अन्दर ले आया।" रामगोपाल ने जवाब दिया।

चन्द्रभानु रामगोपाल की ओर आक्रोश भरी दृष्टि दौड़ाते हुए बोला- "इसके बस्त पर इसके दाम का चिट चिपकाया गया होगा, तुमने उसे क्या किया?"

"वह चिट निकल कर नीचे गिर गया था, मैं ने सावधानी से उसे उठाकर अपनी जेब में डाल लिया है।" यह कहते उसने चिट निकाल कर दूकानदार के हाथ दे दिया।

चन्द्रभानु ने चिट को देख कहा- "इसका दाम दस रुपये लिखा हुआ है। अगर तुम्हें यह कंबल पसंद आया तो दस रुपये देते जाओ।"

"आपने तो अपने ही मुँह से इसका दाम तीन रुपये बताया, ऐसी हालत में दस रुपये देकर इसे खरीदने वाला कोई मूर्ख ही होगा।" यों जवाब देते हुए रामगोपाल ने दूकान में सौदा करनेवाले और ग्राहकों की ओर देखा।

उन सबने रामगोपाल की बातों का समर्थन किया। ग्राहक की वाक्-चातुरी से चन्द्रभानु की बनिक-बुद्धि भी चकरा गई और वह यह समझ नहीं पाया कि रामगोपाल कंबल बेचने आया है या खरीदने। अन्ततोगत्वा चन्द्रभानु ने रामगोपाल की सौदेबाजी का कायल हो, मन ही मन उसकी तारीफ़ करते हुए उसके हाथ तीन रुपयों में ही कंबल बेच दिया।

गोपवरम नामक गाँव में राघवदास और जानकीराम नामक दो काश्तकार रहा करते थे। जमीन खरीदने के मामले को लेकर उन दोनों के बीच कभी मनमुटाव पैदा हो गया था।

राघवदास अपने अनुचरों के उकसाने कारण हर छोटी-सी बात को लेकर जानकी राम के अनुचरों पर झुंझलाया करता था। जानकीराम भी राघवदास से किसी बात में कम न था। वह भी अपने अनुचरों को भडकाया करता था।

गाँव की इस हालत को देख नदी के किनारे कुटी बनाकर रहनेवाले साधु के मन में बड़ा दुख हुआ। उन्होंने दोनों को बुलवाकर समझाया कि आपसी झगड़े अच्छे नहीं होते, मिल-जुलकर रहने में ही दोनों का कल्याण होगा, लेकिन साधु की बातों का उनपर कोई असर न पड़ा।

एक बार राघवदास के मन में यह इच्छा पैदा हुई कि वह अपने अनुचरों के साथ तीर्थाटन करें। वह साधु के दर्शन करके बोला–"साधु महाराज, हम लोग तीर्थाटन करना चाहते हैं। आप भी हमारे साथ अपने शिष्यों को लेकर चलें तो हमें बड़ी प्रसन्नता होगी।"

"तीर्थाटन पर जाने का इस वक़्त मेरा मन नहीं कर रहा है; तुम लोग हो आओ।" साधु ने उत्तर दिया।

राघव ने विनयपूर्वक कहा–"महात्मा, आप तीर्थाटन के खर्च की चिंता न करें। मैं आप लोगों का सारा खर्च उठाऊँगा।"

साधु मंदहास करके बोला–"राघवदास, तुम्हारी श्रद्धा-भक्ति को देख मुझे सचमुच बड़ा आनंद हो रहा है। लेकिन मैं इस बात पर विश्वास नहीं करता कि

गोपाल प्रसाद

इस गठरी को अपने साथ ले जाओ, जिन तीर्थों में तुम स्नान करोगे, वहाँ पर इस गठरी को भी डुबोकर फिर इसे सुरक्षित रूप में मुझे ला दो ।"

राघवदास उस गठरी को लेकर चला गया । इसके एक घंटे बाद जानकीराम साधु की कुटी में पहुँचा । साधु ने उससे पूछा—"क्या तुम भी दक्षिण की यात्रा पर जा रहे हो?"

"महात्मा, सिर्फ़ दक्षिण की यात्रा करना कोई बड़ी बात नहीं है! मैं अपने ग्रामवासियों को साथ लेकर उत्तर के सभी पुण्य तीर्थों का सेवन करते हुए हिमालय में जाना चाहता हूँ। हम चाहते हैं कि आप अपने शिष्यों के साथ हमारे साथ चलें ।" जानकीराम ने विनय पूर्वक कहा ।

"यही बात राघवदास ने भी कही, पर मेरे विचार से इन तीर्थयात्राओं से कोई विशेष लाभ न होगा!" साधु बोले ।

यह उत्तर सुनकर जानकीराम सहम गया और बोला—" साधु महाराज, तीर्थाटन से होनेवाले प्रयोजनों की बात बाद को सोची जा सकती है । राघवदास तीर्थाटन पर जा रहे हैं। आप बताइये कि मैं उससे किस बात में कम हूँ? मैं उससे भी अधिक दूर की यात्राएँ करना चाहता हूँ ।

ऐसे तीर्थाटनों के द्वारा कोई विशेष लाभ होगा!"

यह उत्तर सुनकर राघवदास आश्चर्य में आकर बोला—"आप तो सर्वज्ञ हैं । आप ही जब इस प्रकार समझते हैं तो मैं इसका क्या जवाब दे सकता हूँ? क्या आप यह मानते हैं कि तीर्थाटनों के द्वारा कोई प्रयोजन सिद्ध न होगा?"

साधु पलभर सोचकर बोले—"तुम लोग तीर्थाटन करके लौट आओ, तब मैं अपने विचार बताऊँगा । पर इस यात्रा में तुम मेरी एक मदद करो ।" यों कहकर साधु कुटी के अन्दर चले गये । एक छोटी गठरी लेकर लौट आये और बोले—"तुम

आप कृपया हमारे साथ रहकर हमें आशीर्वाद दीजिए ।"

"तुम बड़े आदर के साथ मेरा स्वागत कर रहे हो, लेकिन तुम्हें निराश करते हुए मुझे बड़ा दुख हो रहा है । तुम एक काम करो, अपने बदले में तुम्हारा साथ देने के लिए एक गठरी देता हूँ ।" यों कहकर उसके हाथ साधु ने एक गठरी दी और उसे तीर्थों में डुबोकर लाने की बात बताई ।

राघवदास और जानकीराम तीर्थाटन करके छे महीने बाद गाँव लौटे और दोनों ने बड़ी सुरक्षा के साथ साधु की दी हुई गठरी वापस कर दी ।

दूसरे दिन उन दोनों को आशीर्वाद देने के लिए साधु ने अपनी कुटी में दावत का इंतजाम किया । दावत के समय राघवदास के अनुचर एक पंक्ति में और जानकीराम के अनुचर दूसरी पंक्ति में आमने-सामने बैठे । साधु ने अपने शिष्यों को रसोई परोसने का आदेश दिया ।

राघवदास और जानकीराम के साथ उनके अनुचर भी प्रत्येक व्यंजन की प्रशंसा करते हुए आनंदपूर्वक खाने लगे । साधु बोले–"तुम लोग तीर्थयात्राएँ करके लौट आये हो! इसलिए विशेष रूप से तुम लोगों के वास्ते एक प्रकार की खीर बनवाई है । यह इन सभी व्यंजनों से कहीं ज्यादा स्वादिष्ट होगी ।" इसके

बाद अपने शिष्यों को खीर परोसने का आदेश दिया।

राघवदास और जानकीराम के साथ उनके अनुचर भी प्रत्येक व्यंजन की प्रशंसा करते हुए आनंदपूर्वक खाने लगे।

अंत में सबको खीर परोसी गई। खीर का स्वाद लेते ही सब लोग नाक-भौं सिकोड़कर साधु की ओर ताकने लगे। साधु ने उन लोगों से पूछा—"क्या खीर स्वादिष्ट नहीं है?"

"उफ़! इस में कोई स्वाद भी है? यह तो एक दम कड़वा है।" सब लोग एक स्वर में बोले।

"इसका कारण यह है कि यह खीर करेला से बनाई गई है। लेकिन वह भी तुम लोगों के साथ सभी तीर्थों का सेवन कर आया है न? इसलिए मैंने सोचा था कि इस कारण वह अपना कड़वापन खोकर मीठा बन गया होगा!" साधु ने जवाब दिया।

सब ने सोचा कि साधु की बातों में कोई मर्म होगा जिसे वे समझ नहीं पा रहे हैं। यह सोचकर सब लोग हाथ साफ़ करके साधु से विदा लेने के लिए उनके सामने आकर खड़े हो गये।

साधु ने समझाया—"करेला जड पदार्थ है। इसीलिए तुम लोगों के साथ सभी तीर्थों का सेवन करने पर भी उसके भीतर कोई परिवर्तन नहीं हुआ। लेकिन हम मानवों की बात अलग है। अनुभवों के द्वारा हम लोग अनेक अच्छी बातें समझ सकते हैं। मेरा विश्वास है कि इस यात्रा ने तुम लोगों के अन्दर बहुत बड़ा परिवर्तन ला दिया होगा।"

ये बातें सुनते ही राघवदास और जानकीराम एक दूसरे से गले मिले, फिर साधु के सामने आकर बोले—"महात्मा, आपने हमारी आँखें खोल दीं: आज से हमारे बीच सच्ची मैत्री होगी, आपसी बैर को हम सदा के लिए छोड़ देते हैं। सभी ग्रामवासी परस्पर भ्रातृभाव से जीवन बितायेंगे।"

साधु उन्हें आशीर्वाद देकर बोले—"तीर्थाटन का सच्चा फल यही है!"

काशी राज्य पर ब्रह्मदत्त का शासन था। उन दिनों में वहाँ बोधिसत्व ने एक ब्राह्मण के घर जन्म लिया। वह नाटा था, इसलिए सब लोग उसे बौना कहकर पुकारते थे। वह बचपन में ही तक्षशिला चला गया, वहाँ पर एक गुरु के यहाँ धनुर्विद्या सीखी और उसमें प्रवीण बन गया। इसके बाद बौने के मन में धनुर्विद्या के द्वारा ही अपनी जीविका कमाने का विचार पैदा हुआ। इसी विचार से वह अनेक राजाओं के दरबार में गया, लेकिन वह बौना था इस कारण किसी राजा ने भी उसको अपने दरबार में नौकरी नहीं दी।

आखिर जब वह एक गाँव में जुलाहों की गली से गुज़र रहा था, तब उस करघे पर कपड़ा बुनते हुए एक आजानुबाहु व्यक्ति दिखाई दिया। बौने ने उसके समीप जाकर पूछा–"भाई, तुम्हारा नाम क्या है?"

"मेरा नाम भीमसेन है।" जुलाहे ने उत्तर दिया।

"तुम देखने में इतने लंबे-चौड़े हो, तुम्हारा नाम भी भीमसेन है, तुम्हें आखिर कपड़ा बुनने की क्या ज़रूरत है?" बौने ने पूछा।

कपड़ा बुनने के सिवा मैं कोई काम-वाम नहीं जानता!" भीमसेन ने कहा।

"तुम्हें दोनों हाथों से कमाने का मैं उपाय बताऊँगा, क्या तुम मेरे साथ चलोगे?" बौने ने पूछा।

भीमसेन ने खुशी से उसकी बात मान ली और बौने के साथ चल पड़ा। दोनों कुछ दिन की यात्रा के बाद काशी राज्य में पहुँचे।

"तुम राजदरबार में जाकर राजा से कह दो कि तुम धनुर्विद्या में प्रवीण हो,

और उनसे नौकरी के लिए प्रार्थना करो। वे तुम्हारी कद और भारी देह को देखकर तुम्हें नौकरी जरूर देंगे।" बौने ने समझाया।

"भाई, मैं तो धनुर्विद्या बिलकुल नहीं जानता, राजा से झूठ कैसे बतला दूं?" भीमसेन ने कहा!

"तुम नहीं जानते तो कोई बात नहीं, मैं अच्छी तरह से जानता हूं। मुझको तुम अपना सेवक बना लो, समय पर मैं तुम्हारी सहायता किया करूंगा!" बौने ने भीमसेन को हिम्मत बंधाई।

इसपर भीमसेन ने काशी राजा के दरबार में जाकर अपने को धनुर्विद्या में प्रवीण बताया और बड़ी आसानी से नौकरी प्राप्त की! उसका वेतन एक पखवारे के लिए एक हज़ार मुद्राएँ निश्चित हुआ। बौना उसके अधीन एक सेवक के रूप में नियुक्त कर लिया गया।

इसी बीच काशी की प्रजा पर एक भारी विपदा आ गई। काशी नगर के समीप के जंगल में कहीं से एक बाघ आ गया और उसने उस रास्ते से आने-जानेवाले लोगों को मारना शुरू कर दिया। यह समाचार मिलते ही काशी नरेश ने भीमसेन को बुलवाकर आदेश दिया–"सुनो, अमुक जंगल में एक बाघ है। तुम अभी जाकर उसका वध कर डालो।"

भीमसेन ने राजा का आदेश मान लिया। बौने के पास आकर सब कुछ बताते हुए बोला–"सुनो भाई, उस नरभक्षी को मारने का उपाय बताकर इस विपदा से मेरी रक्षा करो।"

"मेरी बात सुन लो। तुम अकेले बाघ का वध नहीं कर सकते। नगर के बाहर जाते ही तुम गाँवों के लगभग दो हज़ार लोगों को इकट्ठा करके बाग के समीप जाओ। बाघ का गर्जन सुनते ही तुम किसी झाड़ी में छिप जाना। तुम्हारे साथ जानेवाली जनता बाघ को मार डालेगी। बाघ के मरने तक तुम झाड़ी में छिपे रहो, तब एक बेल को तोड़कर झाड़ी से

बाहर निकलो। इसके बाद बाघ को मरा हुआ देख तुम गुस्से में आ जाओ। लोगों को डांटने के स्वर में बोलो– "बाघ का वध करने के लिए तो तुम सब लोगों की जरूरत ही क्या थी? मैं अकेला ही पर्याप्त था। फिर चिल्ला-चिल्लाकर कहो–'इस बाघ को मारनेवाले आगे आ जाओ, राजा से कहकर मैं उसका सर कटवा डालूंगा।' इस पर लोग डरकर यह कहने लग जायेंगे कि "हमने नहीं मारा, हमने नहीं मारा।" तब तुम राजा के पास लौटकर यह बतला दो कि तुमने ही बाघ का वध किया है! लोगों में से कोई भी व्यक्ति यह कहने का साहस न करेगा कि तुम्हारी बात झूठ है।" यों बौने ने भीमसेन को उपाय बताया।

भीमसेन ने बौने के निर्देश का अक्षरशः पालन किया। गाँववाले जब बाघ को मार चुके तब भीमसेन हाथ में एक लता लेकर बाहर आया और यह कहते हुए उनपर नाराज हो गया कि मैं बाघ को इस बेल से बांधने के लिए लता लाने झाड़ी में गया तो इस बीच तुम लोगों ने उसको जान से क्यों मार डाला? बाघ का वध करनेवाले का सर उड़ा दिया जाएगा!"

गाँववाले भयभीत हो वहाँ से चुपके से खिसक गये। इसके बाद भीमसेन राजधानी में पहुँचा। राजा के दर्शन करके बोला– "महाराज, आपके आदेशानुसार मैंने बाघ का बध कर डाला है। आइंदा उस रास्ते से गुजरनेवालों को किसी प्रकार का डर न होगा।"

राजा भीमसेन के पराक्रम पर बहुत प्रसन्न हुए। भीमसेन का यश चारों तरफ़ फैल गया। सब उसकी प्रशंसा करने लगे। अपनी प्रशंसा सुनते-सुनते भीमसेन सोचने लगा कि वह सचमुच एक महान वीर हो गया है। इस ख्याल से वह अपने सेवक के रूप में रहनेवाले बौन

का अनादर करने लगा। इस बात को बौने ने भाँप लिया, किंतु उसने इस पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया।

उन्हीं दिनों अचानक एक शत्रुराजा ने काशी पर हमला कर दिया और उसके सैनिकों ने नगर को चारों तरफ़ से घेर लिया। तब काशी नरेश के पास यह संदेशा भेजा—"आप हमारी अधीनता स्वीकार करेंगे या युद्ध करेंगे?" राजा ने भीमसेन को बुलवाकर आज्ञा दी—"तुम आवश्यक सेनाओं को ले जाकर शत्रु को पराजित करके लौट आओ।" इसके बाद उसे कवच पहनाकर एक हाथी पर चढ़ाया गया और उसके हाथ में धनुष-बाण देकर युद्धभूमि में भेज दिया गया।

बौना जानता था कि भीमसेन को खतरे का सामना करना पड़ेगा। इसलिए वह भी धनुष-बाण धारण करके भीमसेन के पीछे हाथी पर सवार हो गया। हाथी के चारों तरफ़ घुडसवार और पैदल सेना थी। सब युद्ध क्षेत्र की ओर चल पड़े।

युद्ध भूमि में शत्रु-सेना को पंक्ति बद्ध खड़े देख भीमसेन भयकंपित हो उठा। उसकी देह से पसीना छूटने लगा, उसके हाथ-पैर ढण्डे होने लगे। उसने हाथी से कूदकर भागने की कोशिश की। अगर वक्त पर उसको संभाल कर बौने ने हाथी से बांध न दिया होता तो वह घोड़े के नीचे दब कर मर गया होता।

अब लाचार होकर बौने ने स्वयं सेना का नेतृत्व अपने हाथ में ले लिया। वह हाथी को हांककर शत्रु-सेना के बीच घुस पड़ा, और उन पर बाणों की वर्षा करते हुए सीधे शत्रु राजा के समीप पहुँच गया। उसकी धाक् के सामने शत्रु सेना टिक न सकी और तितर-बितर हो गई। थोड़ी ही देर में शत्रु राजा पराजित होकर बौने के हाथ में बन्दी बन गया।

युद्धक्षेत्र से बौने के लौटते ही राजा को पता चला कि सच्चा धनुर्धारी कौन है?

राजा ने बौने को सेनापति के पद पर नियुक्त किया। बौने ने भीमसेन को अनेक उपहार देकर भेज दिया।

बादशाह अकबर-१

हुमायूं की मृत्यु के समय उसका पुत्र जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर पंजाब में था। चौदह वर्ष की अल्प आयु में ही वह भारत का सम्राट बन बैठा। हुमायूं का मित्र बैरमखां अकबर का अभिभावक बना।

राज्याभिषेक के बाद अकबर को एक साथ अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा। शेरशाह वंशी हेमू नामक सेनापति ने दिल्ली और आगरा पर अधिकार कर लिया। अकबर तथा हेमू की सेनाओं के बीच पानीपत के पास भयंकर संग्राम हुआ। वही द्वितीय पानीपत की लड़ाई के रूप में इतिहास में प्रसिद्ध हुआ।

उस युद्ध में हेमू की शक्तिशाली सेना तथा व्यूह-रचना के सामने अकबर की सेना टिक न सकी। अकबर की पराजय लगभग निश्चित थी। किन्तु शायद अकबर का भाग्य प्रबल था। इसलिए हेमू तीर की चोट खाकर घोड़े से गिर पड़ा। जिसे देख उसके सैनिक भयभीत हो उठे। इसी कारण से अकबर विजय प्राप्त कर सका।

सैनिकों ने हेमू को बन्दी बनाकर अकबर के सामने खड़ा किया। इस पर बैरमखाँ ने सलाह दी–पराजित शत्रु को छोड़ देना ख़तरे से खाली नहीं, उसको मरवा डालो। लेकिन हेमू को असहाय देख अकबर ने उसका वध करने से इनकार कर दिया, इस पर बैरमखाँ ने तलवार लेकर हेमू का सर काट डाला।

परस्पर विरोधी विचारधारा रखनेवाले अकबर तथा बैरमखाँ के बीच मतभेद और शंका की खाई दिनों दिन गहरी होती गई। बैरमखाँ ने अकबर पर अधिकार चलाने की कोशिश की। इस बात को भांप कर अकबर ने उसको पदच्युत कर दिया। बैरमखाँ ने इसका विरोध किया, पर बन्दी बन गया। अंत में अकबर ने उसको मक्का चाने की अनुमति दे दी।

बैरमखाँ के कई शत्रु थे। बैरम खाँ का एक शत्रु अफ़गानवासी था, उसने बैरमखाँ के मक्का जाने का समाचार पाकर मार्ग-मध्य में ही उसे छुरी भोंक कर मार डाला।

द्वितीय पानीपत की लड़ाई में विजय पाने की वजह् से अकबर का यश चारों तरफ़ फैल गया। फिर भी विजय गर्व में न आकर राजपूतों के साथ मैत्री सम्बन्ध स्थापित करने की अकबर ने पूरी कोशिश की। उसने जयपुर के शासक बिहारीमल्ल की पुत्री के साथ विवाह् किया।

इसके वाद अकबर ने अपने साम्राज्य का विस्तार करने की योजना बनाई। सर्व प्रथम अकबर की नज़र रानी दुर्गावती के राज्य गोडवाना पर पड़ी। अपने पति के देहांत के बाद दुर्गावती पुत्र की ओर से शासन-कार्य संभाल रही थी।

गोंडवाना पर अधिकार करने के लिए अकबर ने अनफखाँ नामक सेनापति को भेजा। अचानक ह्मला होने के कारण रानी दुर्गावती युद्ध के लिए तैयार न थी। फिर भी दुर्गावती की सेनाओं ने अकबर की फ़ौज का ह्म्मित के साथ सामना किया।

रानी दुर्गावती ने अपनी सेना का नेतृत्व किया और दुश्मन के पचास हज़ार सैनिकों का साहस पूर्वक सामना किया। युवराज वीर नारायण ने भी युद्ध में भाग लिया। अनफ़ख़ाँ ने किसी भी उपाय से सही युवराज को बन्दी बनाने का व्यूह रचा।

बाणों के प्रहार से आहत वीर नारायण को अनफ़ के सैनिकों ने घेर लिया। यह समाचार मिलते ही रानी दुर्गावती तत्काल घटनास्थल पर पहुँची और अपने पुत्र को छुड़ाकर उसको राजमहल में भिजवा दिया। उसकी रक्षा के हेतु उसके साथ आधे सैनिक चले गये, इस कारण युद्ध भूमि में उसका पक्ष दुर्बल हो गया। अपनी हार निश्चित समझकर रानी दुर्गावती ने अपने शरीर में छूरा भोंककर अपने प्राण त्याग दिये।

रानी दुर्गावती की मृत्यु के बाद युवराज वीर नारायण ने सेना का नेतृत्व किया। वह जानता था कि अकबर की सेना अपार है, फिर भी अंतिम साँस तक वीर नारायण ने शत्रु के साथ वीरतापूर्वक युद्ध किया, और वीर गति को प्राप्त हुआ।
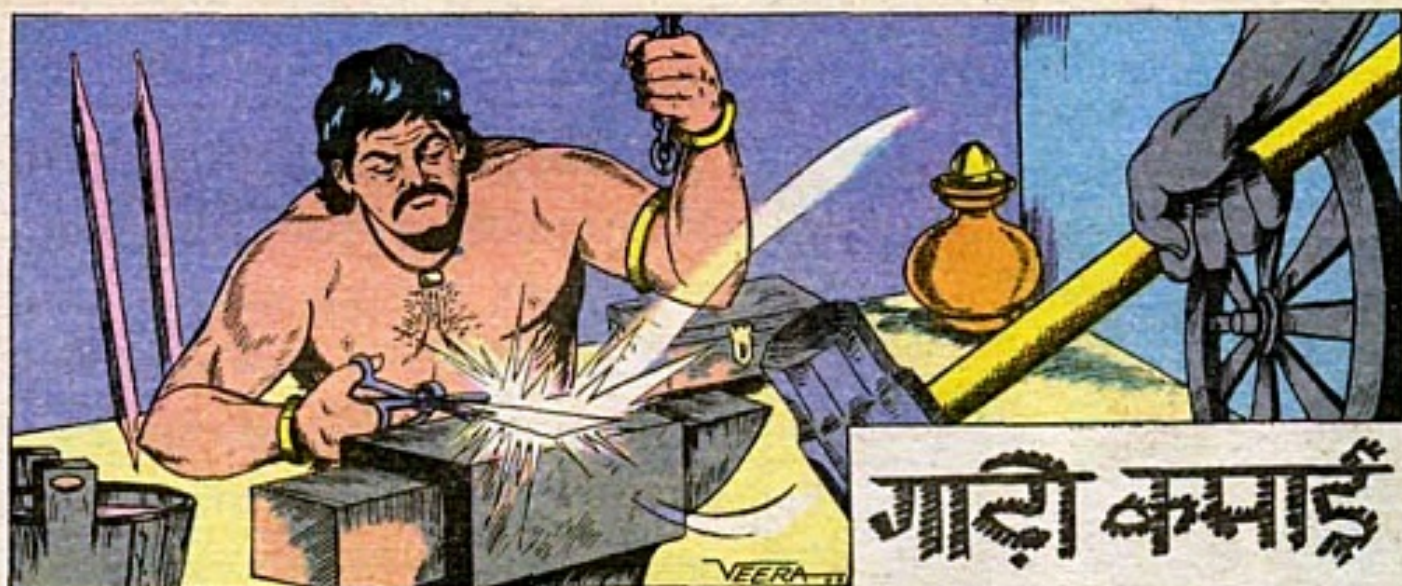
रुद्रपुर में शिवराम नाम का एक मशहूर लुहार था। वह तलवार, छुरी, फावडे, सब्बल वगैरह औजार बनाया करता था।

लोहे से औजार बनाना कोई आसान काम न था। जलनेवाली भाती में फूंक लगाना है, पहले ही कुंदे पर रखकर हथौड़े से पीटना है, हथौड़े से पीटने के लिए बदन में ताक़त होनी चाहिए। शिवराम का बदन गठीला है और पसीना बहाकर मेहनत करके धन कमाने की ललक भी उसके दिल में है।

शिवराम का इकलौता पुत्र गणपति आवारा निकला। इसका मुख्य कारण उसकी माँ नागमणि थी। वह यह नहीं चाहती थी कि उसका बेटा भाथी के सामने बैठकर धौंकने का काम करे। उसका विचार था कि उसके मामा के जैसे वह भी कोई सरकारी नौकरी करे। इसी विचार से नागमणि ने अपने बेटें को पाठशाला में भेज दिया।

पर शिवराम का ख्याल था कि अपने कुल का पेशा अपनाने में हमेशा इज़्ज़त बनी रहती है। फिर भी वह अपनी पत्नी के निर्णय को टाल नहीं पाया।

गणपति वैसे प्रति दिन पाठशाला में जरूर जाता, लेकिन उसके मन में पढ़ने की इच्छा बिलकुल न थी। इस पर शिवराम ने एक दिन गणपति को डांटा–"बेटा, अगर पढ़ने में तुम्हारा दिल नहीं लगता तो धौंकनी के सामने बैठकर काम क्यों नहीं सीख लेते?" लेकिन गणपति अपने पिता से आँख बचाकर दोस्तों के साथ सैर-सपाट करने लगा।

शिवराम की उम्र ढलती गई। यह सोचकर वह दुखी रहने लगा–"क्या मेरे मरने के बाद इस दूकान को बंद करना

२५ वर्ष पहले की चन्दामामा की कहानी

पड़ेगा? मेरी सारी कमाई को मेरा बेटा चन्द दिनों में फूंक देगा। इसके बाद उसे दर-दर भीख मांगना पड़ेगा?"

इस विचार के आते ही उसने अपनी पत्नी को बुलाकर समझाया- "देखो, हमारा बेटा गणपति न घर का रहा और न घाट का। अब भी सही उसे रास्ते पर लाओ। हमारे वंश का पेशा सीखने की सलाह दो।" इसके जवाब में पत्नी बोली- "तुम जल्दी मत मचाओ, वह चुप बैठा नहीं है। नौकरी की खोज में इधर उधर भटक रहा है।"

पत्नी की बातें सुनकर शिवराम के क्रोध का पाश चढ़ गया, वह गरजकर बोला-"क्या बोली? वह नौकरी करेगा? तुम दोनों गाढी कमाई की क़ीमत नहीं जानते। शायद मेरी कमाई पर ऐश-आराम करना चाहते होगे। मेरी कमाई में से एक कौड़ी भी में उसके हाथ लगने न दूंगा। जब से मैंने यह काम शुरू किया है, तब से आज तक कोई दिन ऐसा नहीं गया कि मैंने कम से कम तीन रुपये न कमाये हों। इसको बतला दो, तीन रुपये नहीं, तीन चवन्नी कमाकर दिखला दे।"

इतने में गणपति आ पहुँचा। उसकी माँ ने समझाया- "बेटा, तुम्हारे पिता कहते हैं कि तुम दिन भर में तीन चवन्नी भी नहीं कमा सकोगे। तुम्हें अपने पिता की बात को झूठी साबित करनी होगी!"

गणपति आवेश में आकर बोला-"यह कौन बड़ी बात है? मिनटों में मैं कमा लाता हूँ।" यह कहकर गणपति घर से निकल पड़ा।

लेकिन वह यह नहीं जानता था कि रुपये कैसे कमाये जाते हैं। पैसे पेड़ों पर थोडे ही पलते हैं, तोड लाने के लिए। वह तीसरे पहर तक इतर-उधर भटकता रहा, फिर लौटकर बोला-"माँ, में कड़ी धूप में सब जगह चक्कर काटकर आया हूँ। मेरे सिर में दर्द हो रहा है।"

"बेटा, तुम कुछ कमाकर लाये?" नागमणि ने पूछा।

"नहीं माँ, खाना खाकर फिर चला जाऊँगा।" गणपति ने जवाब दिया।

पर खाना खाने के बाद गणपति ज़ो सोया, शाम को ही उसकी आँख खुली। तब उसके मन में यह विचार आया कि दूकान से लौट कर अगर पिता पूछ बैठे– "बेटा, तीन छवन्नियाँ कहाँ?" मैं क्या जवाब दूं? यह बात सोचते-सोचते उसके दिमाग में कोई उपाय सूझा। झट उसने अपनी माँ से पूछा–"माँ, मैं कल से अवश्य कमा लाऊँगा। आज के लिए तुम मुझे तीन छवन्नियाँ दे दो।"

नागमणि ने सोचा कि गणपति अपने पिता की नजर में निकम्मा साबित होगा, इस विचार से उसने पेटी से तीन छवन्नियाँ लाकर अपने बेटे के हाथ में रख दीं।

शिवराम संध्या के होते ही अपनी दूकान बंदकर घर लौटा। गणपति ने ठाठ से तीन छवन्नियाँ निकालकर पिता के हाथ धर दीं। तब बोला–"लो, यह मेरी कमाई है!" शिवराम ने तीन छवन्नियों को उलट-पलटकर देखा फिर पूछा–"बेटा, बताओ, ये छवन्नियाँ तुम कहाँ से लाये?" गणपति ने कहा–"कहाँ से क्या? सुबह से शाम तक बैल की तरह काम करके कमा लाया हूं।"

"यह तुम्हारी मेहनत की गाढ़ी कमाई नहीं।" यह कहते हुए शिवराम ने चूल्हे में छवन्नियाँ फेंक दीं।

दूसरे दिन नागमणि ने गणपति को समझाया–"बेटा, आज तुम मेहनत करके किसी न किसी तरह जरूर कमा लाओ! वरना हम दोनों की नाक कट जाएगी।" दूसरे दिन गणपति ने अपनी माँ की आँख बचाकर संदूक से एक रुपया चुरा ले गया। एक छवन्नी की पकौड़ियाँ खरीद कर खा डाला। बाकी तीन चवन्नियाँ रात को अपने पिता के हाथ में देकर बोला–"लो, आज की मेरी यह कमाई।" पिछले दिन की तरह पिता ने उन तीन

चवन्नियो को उलट पलट कर देखा, तब बोला–"मैं जानता हूँ कि यह तुम्हारी गाढ़ी कमाई नहीं है। तुम मुझको धोखा देने की कोशिश मंत करो।" यह कहते हुए शिवराम ने उन छवन्नियों को भी चूल्हे में फेंक दिया।

तीसरे दिन गणपति को संदूक में एक कौड़ी भी न मिली। इसलिए उसने निश्चय किया कि खुद मेहनत करके कमाना चाहिए। गणपति हाट में गया। गठरियाँ ढोकर पैसे कमाने लगा। संध्या तक काम करने पर भी छवन्नी से ज्यादा उसके हाथ न लगी। दूसरे दि: भी मेहनत करके गणपति ने थोडा-बहुत कमाया। वैसे मेहनत करने की उसकी आदत न थी। मगर उसने लगन के साथा मेहनत की, फिर भी एक छवन्नी से ज्यादा वह कमा नहीं सका। तीसरे दिन भी काम करने परही वह तीन चवन्नियाँ जुटा सकता था।

तीसरे दिन तीन चवन्नियाँ ले जाकर गणपति ने अपने पिता के हाथ में दे दी। लेकिन इस बार भी उसके पिता ने चूल्हे में डाल दिया। पर गणपति से रहा नहीं गया। उसने दौड़कर चूल्हें में से चवन्नियाँ उठा लीं। इस पर शिवराम मुस्कुराते हुए बोला–"बेटा, यह तुम्हारी गाढ़ी कमाई है। इसके पहले मैंने दो बार चवन्नियाँ चूल्हे में फेंक दीं तो तुम्हें थोड़ी सी भी तक़लीफ़ नहीं हुई। जानते हो, वह तुम्हारी गाढी कमाई नहीं थी। गाढ़ी कमाई के प्रति हमारी ममता होती है। कोई अगर कमाकर देता है तो उसका मूल्य हम नहीं जानते। इसलिए सबको खुद कड़ी मेहनत करके धन कमना चाहिए। उसी में हमें अपार आनंद होता है।"

"पिताजी, तुम सच कहते हो!" गणपति ने जबाब दिया। उस दिन से गणपति ने मेहनत करके कमाना शुरू कर दिया। वह एक योग्य नागरिक बनकर न केवल अपने माता-पिता को सुख पहुँचाया, वह भी स्वयं सुखी बन गया।

अपशकुन

विश्वनाथ शास्त्री एक दिन किसी जरूरी काम से शहर केलिए रवाना हुआ। उस के घर से निकलते वक्त पडोसी नौकर का लड़का सर पर नया बर्तन लेकर सामने से आ गुजरा।

विश्वनाथ शास्त्री की पत्नी जो अपने पति को विदा करने ड्योढ़ी पर आई थी, बोली- "आज का सगुन अच्छा नहीं है ! हाथ-पाँव धोकर अभी रुक जाइये, थोड़ी देर के बाद जाइयेगा। अभी घर के अन्दर आ जाइये ।"

"मैं सगुन और मुहूर्त पर विश्वास नहीं रखता।" यों कह कर विश्वनाथ शास्त्री यात्रा पर चल पड़ा। पर वह निश्चित तिथि घर नहीं लौट सका, इस पर उसकी पत्नी ने सोचा कि अपशकुन के कारण उसके पति के साथ कुछ अमरांल हुआ है। इसलिए उसने पुरोहित रामशास्त्री को बुलवा कर सारा हाल सुनाया।

रामशास्त्री ने बताया- "अपशकुन का दोष दूर करने केलिए शांति के मंत्र पढ़ना होगा। इसके वास्ते सौ रुपये का खर्च बैठेगा।" इस पर विश्वनाथ शास्त्री की पत्नी ने पुरोहित के हाथ सौ रुपये दे दिये। पुरोहित ने शांति के मंत्र पढ़कर आवश्यक तंत्र किया।

इस घटना के दो दिन बाद विश्वनाथ शास्त्री शहर से लौट आया। पत्नी के मुँह से सारी बातें सुन कर उसने विश्वास किया कि अपशकुन का फल उसे भोगना पड़ा है।

स्वार्थी पंडित

मराल देश पर पुष्पकांत नाम का राजा शासन करते थे। उनके दरबार में मुचिकुंद नामक एक पंडित था। वह बड़ा स्वार्थी और घमण्डी भी था। राज़ दरबार में उन्हीं लोगों को प्रवेश मिलता था जो पहले मुचिकुंद के दर्शन करके अपनी बातों और सेवाओं से उसे खुश करते थे। इस कारण कई पंडित और ज्ञानी राजाश्रय न पाकर दूसरे देशों के प्रवासी बन जाते थे।

एक बार कृष्णकांत नामक युवक गुरुकुल में अपनी विद्या समाप्त कर राजाश्रय प्राप्त करने के विचार से आया। उसे जल्दी ही दरबार की हालत और मुचिकुंद की स्वार्थपरता का पता चल गया। कृष्णकांत ने सोचा कि मुचिकुंद के आश्रय में जाकर राज दरबार में प्रवेश पाना संभव नहीं है। इसलिए उसे और उपायों के द्वारा राजाश्रय प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए। पर उसके प्रयत्नों का पता पहले से ही मुचिकुंद को चलने पर वह राज दरबार में प्रवेश पाने से कोई न कोई विघ्न पैदा कर सकता है।

ये ही सारी बातों पर विचार करके कृष्णकांत ने अपने एक रिश्तेदार के द्वारा राज नर्तकी मंदारमाला का परिचय प्राप्त किया। वह कृष्णकांत के पांडित्य पर मुग्ध हो गई और उसको राजा के दर्शन अवश्य कराने का वचन दिया।

एक दिन मंदारमाला अपने नृत्य प्रदर्शन के संदर्भ में दरबार में जाते हुए कृष्णकांत को भी अपने साथ ले गई। कृष्णकांत राज नर्तकी के साथ था, इस कारण द्वारपालों ने उस को दरबार में प्रवेश करने से नहीं रोका।

अपने नृत्य प्रदर्शन की समाप्ति पर मंदार माला कृष्णकांत को राजा के पास ले गई और उसका परिचय कराते हुए बोली- "प्रभु, ये कृष्णकांत नामक एक पंडित हैं। हमारे गुरुजी के भानजे हैं। आप की कृपा और आश्रय पाने

त्रिलोकीनाथ वर्मा

के उद्देश्य से आप की सेवा में आये हैं। ये अनेक विद्याओं में पारंगत हैं। आप इनकी विद्याओं की परीक्षा लीजिये। यदि आप इनके पांडित्य से संतुष्ट हो जायेंगे तभी जाकर आप इनको अपने दरबार में आश्रय दीजिए !"

राजा कृष्णकांत को परख कर देख रहे थे, इस बीच कृष्णकांत बोले- "महाराज, मैं काशी में अपनी विद्या समाप्त कर लौटा हूँ। संस्कृत के पंच महाकाव्यों के साथ मैं ने समस्त शास्त्रों का अध्ययन किया है ! आशु कविता भी कर सकता हूँ।"

राजा ने मंदहास करके सर हिलाया। इस पर मुचिकुंद परिहास पूर्ण स्वर में बोले- "ऐसे महान पंडित को दरबारी कवियों के द्वारा राजाश्रय प्राप्त करने की कोशिश करने के बदले राज नर्तकी के आश्रय में जाने की दुर्दशा क्यों हो गई है ?"

इस पर कृष्णकांत ने राजा से निवेदन किया- "जो अहंकार और स्वार्थ नहीं रखते, वे ही सच्चे माने में पंडित होते हैं। इसलिए यहाँ के प्रधान पंडित के आश्रय में जाने के बदले राज नर्तकी के आश्रय में जाना पड़ा"

यह उत्तर सुनते ही राजा की भौहें तन गई। उन्होंने मुचिकुंद की ओर आश्चर्य पूर्ण दृष्टि दौड़ाई। मुचिकुंद ने कठोर स्वर में कहा- "महाराज, आपसे निवेदन है कि इस को तुरंत दरबार से बाहर भेजने की कृपा करें। ये तो बड़े ही घमण्डी हैं और राज सभा की मर्यादा

का अतिक्रमण कर रहे हैं। साथ ही आप के दरबारी पंडितों परआक्षेप प्रकट कर रहा है ! दर असल ये शिष्टाचार तक नहीं जानते ! ऐसे लोगों के प्रवेश से हमारी राज सभा का मान-सम्मान भी घट जाएगा।"

कृष्णकांत ने मंदहास करके मुचिकुंद से कहा- "सहकर्मी पंडित को सभा भवन से बाहर भिजवाने की पद्धति यह नहीं है। हो सके तो तर्क में मुझको पराजित कीजिए। तब मैं आप से क्षमा मांगकर चला जाऊँगा, वरना इस दुर्व्यवहार केलिए आप ही को मुझ से क्षमा मांगनी पड़ेगी।"

राजा ने मुचिकुंद तथा कृष्णकांत के बीच वाद-विवाद का प्रबंध किया। मुचिकुंद ने कृष्णकांत से कई प्रश्न पूछे, सब प्रश्नों का

सही उत्तर देकर कृष्णकांत ने दरबारियों की प्रशंसा प्राप्त की। अब कृष्णकांत की बारी आ गई। उसने मुचिकुंद से पूछा- "मैं आप से सिर्फ़ तीन प्रश्न पूछूँगा। आप इनके सही उत्तर दीजिए।" यों कह कर उसने पूछा- "दस लोगों के साथ बांटने पर बढ़ने वाली चीज़ क्या है? कौन उत्तम प्रश्न कहलाता है? कौन उत्तम गुरु होते हैं?"

ये प्रश्न सुनकर मुचिकुंद क्रोध में आ गया और उसने अंट-संट जवाब दे दिये। पर कृष्णकांत ने उनको सही उत्तर नहीं माना।

"तब तो तुम्हीं सही समाधान देकर दरबारियों तथा राजा से प्रशंसा प्राप्त कर लो।" मुचिकुंद ने कहा।

इस पर कृष्णकांत ने कहा- "दस लोगों के साथ बांटने पर बढ़ने वाली चीज़ प्रसन्नता है। संदेह के निवारण के लिए पूछा जाने वाला सवाल ही उत्तम प्रश्न कहलाता है! उसका प्रयोजन ज्ञान का संपादन है। इसलिए विद्यार्थी के भीतर ज्ञान की तृष्णा पैदा करने वाला व्यक्ति ही उत्तम गुरु होता है। ऐसी तृष्णा रखने वाला व्यक्ति कभी संतुष्ट नहीं होता! वह और अधिक ज्ञान का संपादन करने का अनुवेष्ण किया करता रहता है।"

राजा ने संतुष्टिपूर्वक सर हिलाया। सारा दरबार हर्षध्वनि के साथ गूंज उठा। मुचिकुंद ने लज्जा के मारे सर झुका लिया। कृष्णकांत ने राजा को मुचिकुंद के दुर्व्यवहार का परिचय दिया।

सारा वृत्तांत सुनकर राजा क्रोध में आकर बोले- "मैं आज तक इस भ्रम में पड़ा हुआ था कि मुचिकुंद कोई महापंडित है!"

"महाराज, मैं समझता हूँ कि इस घटना के बाद मुचिकुंद के भीतर के अहंकार और स्वार्थ का दमन हुआ होगा। इसलिए आप इनको क्षमा करने की कृपा करें।" कृष्णकांत ने राजा से अनुरोध किया।

राजा ने मौन पूर्वक सर हिलाया। इसके बाद मुचिकुंद राजा तथा कृष्णकांत को प्रणाम करके नतमस्तक हो दरबार से बाहर चला गया।

कर्ज वसूली

गोविंद दास कभी किसी से कर्ज लेता था तो उसे चुकाने में ऋणदाता को खूब परेशान किया करता था। एक बार उसने अपने पड़ोसी रामनारायण को अपनी विपदा सुनाकर उससे दो सौ रुपये कर्ज लिया। चार-पांच महीने बीत गये। गोविंदास कर्ज चुकाना तो दूर, उलटे घर पर रहते हुए भी यह कहलाने लगा कि वह घर पर नहीं है।

एक बार रामनारायण को खबर मिली कि गोविंद दास गाय खरीदने केलिए हाट में जा रहा है। वह भी उसके पींछे थोड़ी देर करके हाट की ओर चल पड़ा। गोविंद दास को हाट में पसंद की गाय नहीं मिली।

संध्या के होते ही दोनों घर लौटने लगे। रास्ते में झाड़ी के पींछे से एक आदमी लाठी लेकर उन की ओर बढ़ा और गरजकर बोला- "तुम लोग चुप-चाप अपने पास जो कुछ धन है, दे दो, वरना तुम्हारे सर फोड़ डालूँगा।"

चोर के अपने समीप आने के पहले ही गोविंद दास अपने रुपयों की थैली रामनारायण के हाथ सौंपते हुए बोला- "इस थैली में कुल तीन सौ रुपये हैं। मूल धन और ब्याज को काट कर जो कुछ बचेगा सो तुम मुझे बाद को दे देना।"

इस बीच चोर रुपयों की थैली खींच कर भाग गया। दूसरे दिन रामनारायण ने अपने नौकर के हाथ बीस रुपये भेजते एक चिट में यह लिखकर दिया- "गोविंद दास, तुम्हारा कर्ज चुक गया है। रात को जो चोर आया था, उसकी मजदूरी और मेरे मूल धन व ब्याज काट कर बचे हुए रुपये भेज रहा हूँ।"

मिर्जापूर के जमींदार गोपाल प्रसाद सरल स्वभाव के थे। वे ठाठ-बाट और शान-शौकत से कोसों दूर थे। उनके आश्रय में जाने वाले लोग यदि उन में ऐसे गुणों का आरोप करने की कोशिश करें जो उन में नहीं हैं या उनकी झूठी तारीफ़ करके उनको खुश करने का प्रयत्न करें तो ऐसे लोगों का सत्कार करने के बदले उन्हें डाँट कर भेज दिया करते थे।

गोपाल प्रसाद के महल में उनके पूर्वजों के कई आदम कद चित्र थे। उन में अधिकांश लोग अत्यंत गंभीर और दर्प पूर्वक चित्रित किये गये थे। जमींदार ने अपने पुरखों की सच्ची रूप-रेखाओं व आदतों के बारे में कुछ लोगों के मुँह से सुन रखा था। वे सोचा करते थे कि केवल अपने आश्रयदाताओं को प्रसन्न करने केलिए ही चित्रकार उनके चित्रों में कुछ कल्पित भावों का आरोप किया करते हैं।

गोपाल प्रसाद के मन में भी अपना एक आदम कद तैल चित्र बनवाने का विचार आया। पर वे चाहते थे कि उनका चित्र अत्यंत ही सहज एवं स्वाभाविक हो और कृत्रिम न हो।

जमींदार को मालूम हुआ कि रंगपूर के दरबारी चित्रकार गोविंद भट्ट बहुत ही सहज चित्र खींचने की क्षमता रखता है।

जमीन्दार ने गोविंद भट्ट को बुलवाकर कहा- "मैं ने सुना है कि आप एक महान चित्रकार हैं, आप कृत्रिम रूप-रेखाएँ चित्रित करना छोड़ यथार्थ रूप में मेरा चित्र खींचिए। ऐसा करने पर ही उस चित्र केलिए पुरस्कार दिया जाएगा, वरना नहीं।"

गोविंद ने जमीन्दार की शर्त मान ली और कुछ ही दिनों में गोपाल प्रसाद का चित्र पूरा कर दिया। इस के बाद अंतिम रूप-रेखाएँ भी

रामचन्द्र तिवारी

पूरी कर लीं और चित्र को जमीन्दार के पास ले जाकर बोला- "आप के आदेशानुसार चित्र पूरा किया गया है । आप कृपया देखने का कष्ट करें ।"

गोविंद भट्ट की बातों में कोई असत्य नहीं था, पर जमींदार चित्रकार की परीक्षा लेने के ख्याल से बोला- "तुम तो अपनी चित्रकला की कुशलता की तारीफ़ करते हो, वरना तुम यह कैसे कह सकते हो कि यह चित्र सही अर्थों में मेरा प्रति रूप है ।"

इस पर गोविंद भट्ट ने कहा- "चित्र के समाप्त होते ही मैं ने इसे जौनपुर के जमींदार राय कृष्णदास को दिखाया, इस पर उन्होंने कहा था कि मेरा चित्र आप की आकृति का एक दम सहज प्रति रूप है ।"

यह जवाब सुनकर जमीन्दार अचरज में आ गया और बोला- "राय कृष्ण दास और हमारे बीच अनेक दिनों से मनमुटाव चला आ रहा है, इस के अतिरिक्त वे चित्रकला के प्रति किसी प्रकार की अभिरुचि भी नहीं रखते। ऐसे व्यक्ति को मेरा चित्र दिखाने में तुम्हारा उद्देश्य क्या है ? यह बात मेरी समझ में नहीं आ रही है ।"

"मैं जानता हूँ कि आप के तथा राय कृष्ण दास के बीच आपसी वैर है। इसी कारण से मैं ने सोचा कि अगर मेरे चित्र में कोई तृटि हो तो स्पष्ट रूप से उसकी ओर उंगली दिखाने में वे संकोच नहीं करेंगे । इसी विचार से मै ने उन को यह चित्र दिखाया है। उन्होंने आपके चिपके
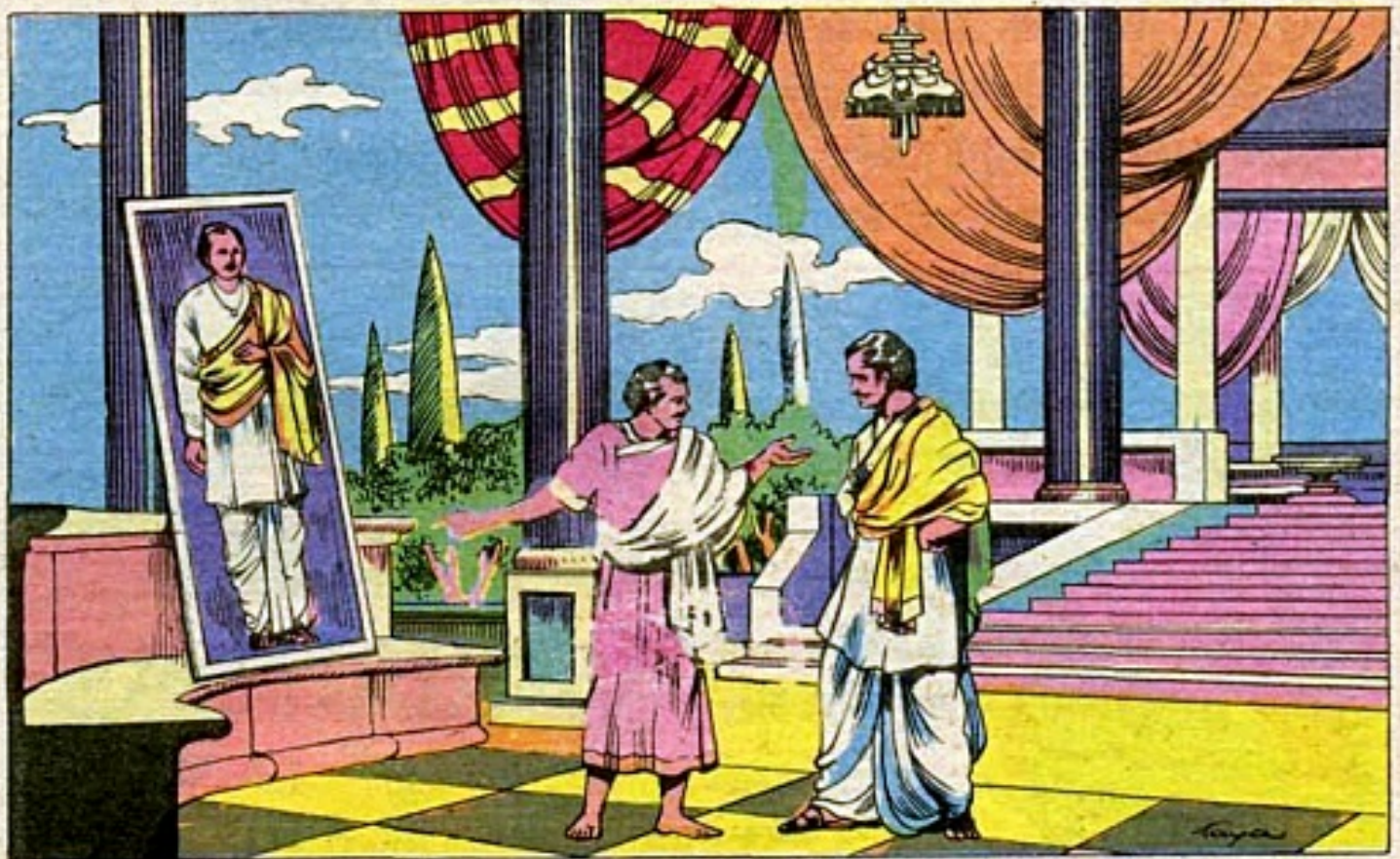
गाल व दायीं कनपटी के नीचे के दाग को गुप्त रूप से चित्रित देख मुझे बताया कि आप का चित्र अत्यंत ही सहज है, स्वाभाविक है, पर देखो कहीं जमीन्दार साहब आप पर नाराज़ न हो जाए !" गोविंद भट्ट ने कहा ।

. गोपाल प्रसाद ने पल भर सोचकर कहा- "उफ, ऐसी बात है ! तुमने मेरी कचहरी के किसी व्यक्ति को मेरा चित्र दिखाया है ?"

"जी हाँ, मैं ने दीवान साहब और महारानी साहिबा को भी आप का चित्र दिखाया है, आप कृपया इस संबंध में उनकी राय स्वयं जान लीजियेगा" गोविंद भट्ट ने कहा ।

जमीन्दार ने दीवान साहब को बुलवाकर तैल वर्ण चित्र के बारे में उनकी राय मांगी ।

दीवान साहब ने उत्तर दिया- "गोविंद भट्ट द्वारा चित्रित इस चित्र में मुझे कोई तृटि नज़र आती है । उन्होंने आप के चित्र को आपके पिता, दादा और पर दादाओं के चित्रों जैसे शान के साथ चित्रित नहीं किया है । वास्तव में आप राणा प्रताप से भी अधिक कहीं गंभीर दिखाई देते हैं ।"

इसके बाद जमीन्दार ने उस चित्र को अपनी पत्नी को दिखाया । उन्होंने चित्र को परख कर देखा और कहा- "इस चित्र में आप की शान व गंभीरता आप के पुरखों से कहीं कम तो मुझे दीखती नहीं, लेकिन उम्र की दृष्टि से देखा जाय तो अपनी वास्तविक अवस्था से पांच-छः वर्ष की अधिक आयु वाले जैसे आप इस चित्र में दिखाई देते हैं ।"

जमीन्दार गोपाल प्रसाद उनकी बातें सुन मंद हास करते हुए गोविंद भट्ट से बोले- "मेरे प्रति श्रद्धा, भक्ति एवं विश्वास के कारण दीवान साहब ने तथा प्रेम और अनुराग के कारण महारानी ने भी मेरे इस चित्र के बारे में सही विचार प्रकट नहीं किये हैं । इसलिए मेरे प्रति सद्भावना न रखने वाले जमीन्दार राय कृष्ण दास का निर्णय ही सही है । आपने मेरे चित्र को अत्यंत सहज एवं स्वाभाविक रूप में चित्रित कर महान चित्रकार होने के अपने नाम को सार्थक बनाया है ।" यों चित्रकार की प्रशंसा करके जमींदार ने उनका सम्मान किया ।

विष्णु पुराण

हिरण्यकश्यप ने प्रह्लाद का आलिंगन करके कहा- " प्रह्लाद, तुम्हारी वजह से इतने साल बाद मुझे विष्णु के साथ लड़ने का मौक़ा मिल गया है।" यों कहते गदा उठा कर नरसिंहावतार के साथ लड़ने को तैयार हो गया। आख़िर नृसिंह ने प्रलय गर्जन करते हुए उछल कर हिरण्य कश्यप को कसकर पकड़ लिया और उस को सभा भवन के द्वार तक ले गये।

इसके बाद अन्दर व बाहर से अतीत द्वार के चतूबरे पर, रात व दिन से परे संध्या के समय, आकाश व पृथ्वी से भिन्न अपनी जाँघों पर रखकर, सजीव व निर्जीव से परे नाखूनों से ब्रह्मा के द्वारा प्राप्त सभी वरदानों से भिन्न रूप में विष्णु ने नृसिंह अवतार के रूप में हिरण्यकश्यप को पेट फाड़कर मार डाला।

इस पर सभी राक्षस एक साथ विष्णु पर हमला करने निकले, पर विष्णुचक्र ने उन सब का संहार कर डाला।

नृसिंहावतार को आंतड़ियों को गले में हार की भांति पहनकर उग्र रूप में अट्टहास करते देख देवता डर गये। लक्ष्मीदेवी भी डर गई। उस समय प्रह्लाद ने नृसिंह अवतार की स्तुति करके उन्हें शांत किया।

नृसिंह ने प्रह्लाद को अपने पिता की अन्त्येष्टि क्रियाएँ, करने तथा तदनंतर राज्य सूत्र को संभालने का आदेश दिया। फिर उसको आशीर्वाद देकर नृसिंह अवतार लिये हुए विष्णु अंतर्धान हो गये। इस प्रकार जय और विजय का पहला जन्म समाप्त हो गया।

विष्णु के आदेशानुसार प्रह्लाद ने चिरकाल तक राज्य-शासन किया, इसके बाद अपने पुत्र

६. त्रिविक्रम वामनावतार

विरोचन को गद्दी पर बिठाया। वह विष्णु भक्ति से प्रेरित होकर जंगलों में चला गया।

विरोचन के बाद उसका पुत्र बलि गद्दी पर बैठा। क्षीरसागर के मंथन के समय उच्चैश्रवा नामक जो घोड़ा पैदा हुआ था, उस पर बलि ने अधिकार कर लिया। राक्षसों का शिल्पी मय ने उसको थल, ज़ल व गगन में विचरण कर सकनेवाला वाहन बना कर दिया।

अमृत की प्राप्ति में राक्षसों के साथ जो अन्याय हुआ, उसका बदला लेने के विचार से बलि देवताओं के साथ लड़ने को तैयार हो गया। देवताओं ने अमृत का सेवन किया था, इस कारण उन में साहस और हिम्मत बढ़ गई थी, इसलिए बड़े ही उत्साह के साथ उन्होंने राक्षसों का सामना किया। बलि ने इन्द्र के साथ भयंकर युद्ध किया। देवताओं तथा राक्षसों के प्रमुख व्यक्तियों के बीच आमने-सामने तथा यत्र-तत्र भी युद्ध हुए। देव व दानवों के उस संग्राम में राक्षस बुरी तरह से हार गये। राक्षसों के गुरु शुक्राचार्य ने मृतसंजीवनी विद्या के द्वारा मृत राक्षसों को पुनः जीवित कर दिया।

देवताओं से मुँह की खाने के बाद बलि ने बड़े लगन से राक्षसों को फिर से संगठित किया तथा देवताओं को हराकर अपने राज्य का विस्तार किया, सारे भूमण्डल पर अधिकार करके बड़ी दक्षता के साथ राज्य करते हुए बलि चक्रवर्ती कहलाया। शुक्राचार्य ने उसके द्वारा एक सौ अश्वमेध यज्ञ कराये।

इसके बाद बलि ने स्वर्ग पर आक्रमण कर दिया। उसके हमले से घबराकर स्वर्ग के निवासी देवता जंगलों में भाग गये। दिक्पाल भी बलि चक्रवर्ती की अधीनता को स्वीकार करके उसके आदेशों का पालन करने लगे। स्वर्ग, मर्त्य व पाताल लोकों पर चक्रवर्ती बलि न्याय और धर्मपूर्वक शासन करने लगा। उस समय इंद्र की माता अदिति अपने पति कश्यप प्रजापति से बोली- "हमारी संतान बने देवता तथा शची व इन्द्र जंगलों में अनन्त असह्य यातनाएं झेल रहे हैं। इसलिए उन्हें पुनः स्वर्ग

पाने का कोई उपाय हो तो बतला दीजिए !"

इस पर कश्यप ने कहा कि तुम विष्णु के प्रति भक्तिपूर्वक व्रत का आचरण करो। अदिति ने कश्यप के उपदेशानुसार विष्णु के प्रति आराधना करके उनको प्रसन्न किया। विष्णु ने बताया कि मैं तुम्हारे गर्भ से जन्म धारण करके देवताओं को फिर से स्वर्ग वापस दिलाऊँगा।

इस प्रकार विष्णु ने अदिति व कश्यप के यहाँ बौने शिशु के रूप में जन्म धारण करके दशावतारों में से पांचवाँ वामनावतार लिया।

वामन ने उपनयन के बाद वैदिक विद्याएँ समाप्त कर लीं और इन्द्र के छोटे भाई तथा अदिति के प्यारे पुत्र के रूप में पलने लगे।

उस समय बलि चक्रवर्ती नर्मदा नदी के तट पर शुक्राचार्य के नेतृत्व में विश्वजित यज्ञ प्रारंभ करके अपार दान दे रहा था।

वामन ने जनेऊ, हिरण का चर्म व कमण्डलु धारण किया, छाता हाथ में लेकर खड़ाऊँ पहन लिया और मूर्तिभूत ब्रह्म तेज के साथ बलि चक्रवर्ती के पास चल पड़े।

छोटे-छोटे डग भरने वाले वामन को देख यज्ञशाला में एकत्रित सभी लोग प्रसन्न हो उठे। वामन ने बलि चक्रवर्ती के समीप जाकर जय-जयकार किया।

वामन को देखते ही बलि चक्रवर्ती के मन में अपूर्व आनंद हुआ। उसने पूछा- "अरे मुन्ने ! तुम तो अभी शिशु के अवतार में ही हो,

तुम कौन हो ? एक नये ब्रह्मचारी के रूप में कहाँ केलिए चल पड़े ?"

"मैं तुम से ही मिलने आया हूँ। मैं अपना परिचय क्या दूँ ? सब लोग मेरे ही हैं, फिर भी इस वक्त मैं अकेला हूँ। वैसे मैं संपदा रखता हूँ, पर इस समय एक याचक हूँ। तुम्हारे दादा, पर दादा महान वीर थे। तुम्हारे शौर्य और पराक्रम दिगंत तक व्याप्त हैं।" वामन ने कहा। इस पर बलि चक्रवर्ती हँसते हुए बोला- "आप की बातें तो कुछ विचित्र मालूम होती हैं। आप शौर्य और पराक्रम की चर्चा कर रहे हैं। युद्ध करने की प्रेरणा तो नहीं देंगे न ? क्यों कि इस वक्त मैं यज्ञ की दीक्षा लेकर बैठा हूँ। इसलिए युद्ध का कोई सवाल ही नहीं उठता !"

इस पर वामन बोले- "वाह, आपने कैसी बात कही ? यों तो आपने मेरे साथ मजाक किया, महान बल-पराक्रमी बने आप के सामने बौना बने हुए मेरी गिनती ही क्या है ? एक अपूर्व दाता बन कर अपार दान करने वाले आपका यश सुनकर आपकी स्तुति करके याचना करने आया हूँ ।"

"अच्छी बात है, मांग लीजिए, आप जो भी मांगे, वही देने का वचन देता हूँ ।" बलि चक्रवर्ती ने कहा ।

इस पर शुक्राचार्य ने बलि चक्रवर्ती को बुलाकर समझाया- "ये वामन साक्षात् विष्णु हैं, तुम्हें धोखा देकर तुम्हारा सर्वस्व लूटने के लिए आये हुए हैं ! तुम उन को किसी प्रकार का दान मत दो ।"

बलि चक्रवर्ती ने कहा- "विष्णु जैसे महान व्यक्ति मेरे सामने याचक बनकर हाथ फैलाते हैं, तो मेरे हाथों द्वारा कोई दान देना मेरे लिए भाग्य की ही बात मानी जाएगी, यह मेरी अद्भुत विजय का परिचायक भी होगा । इसके अतिरिक्त वचन देकर उस से विमुख हो जाना उचित नहीं है । मेरा वचन झूठा साबित होगा न ?"

"आत्मरक्षा के वास्ते किया जाने वाला कर्म असत्य नहीं कहलाता, पर अनुचित धर्म भी आत्महत्या के सदृश्य ही माना जाएगा न ?" शुक्राचार्य ने कहा ।

"चाहे जो हो, वे चाहे मेरे साथ कुछ भी करें, या मैं हार भी जाऊँ; फिर भी वह मेरी पराजय नहीं मानी जाएगी । यह धर्मवीरता ही होगी ! वैसे शिवि चक्रवर्ती आदि जैसे दान करके यश पाने की कामना भी मेरे अन्दर नहीं है, बल्कि वचन देकर इसके बाद उससे मुकर कर कायर कहलाना मैं नहीं चाहता ।" बलि चक्रवर्ती ने कहा ।

इस पर शुक्रचार्य क्रोध में आ गये और शाप देने के स्वर में बोले- "तुम्हारे गुरु के नाते मैं ने तुम्हारे हित केलिए जो बातें कहीं, उन्हें तुम धिक्कार रहे हो । याद रखो, तुम अपने राज्य तथा सर्वस्व से हाथ धो बैठोगे !"

बलि चक्रवर्ती ने विनयपूर्वक कहा- " गुरु

देव, आप नाहक़ अपयश के शिकार हो गए। मैं सब प्रकार के सुख-दुखों को समान रूप से स्वीकार करते हुए दान देने केलिए तैयार हो गया हूँ, पर आप का यह शाप विष्णु के तहत वरदान ही साबित हुआ, क्यों कि गुरु के वचन का धिक्कार करने के उपलक्ष्य में प्राप्त शाप को विष्णु केवल अमल करने वाले हैं; पर अन्यायपूर्वक उन्होंने बलि के साथ दगा किया है, इस अपयश से वे दूर हो गये। मैं आपके शाप को प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार कर रहा हूँ।''

शुक्राचार्य का चेहरा सफेद हो उठा। उन्हों ने लज्जा के मारे सर झुका लिया। वे निरुत्तर हो गये।

इस के बाद बलि चक्रवर्ती वामन के पास जाने लगे, तब शुक्राचार्य ने कहा- ''हे दानव राज, विष्णु याचक के रूप में आकर तुमको याचक बनाते हैं या अधः पाताल को दबा देते हैं, चाहे कुछ भी कर सकते हैं। आपने इन तीनों लोकों का आधिपत्य, संपदा, वैभव, किसी कामना को लेकर ही इतना श्रम करके अर्जन किया था, पर शरीरिक सुखों के बाद ही तो कोई भी धर्म-साधना की जाती है ?''

राज्य और संपदा शाश्वत नहीं हैं। जैसे कमाते हैं, वैसे खोना भी सहज ही है। शरीर भी तो शाश्वत नहीं है।'' बलि चक्रवर्ती ने कहा।

''यह विनाश केवल तुम्हारे लिए ही नहीं, बल्कि याद रखो कि समस्त दानव वंश का है और हम सब केलिए यह अपमान की बात है।'' शुक्राचार्य ने चेतावनी दी।

''यही नहीं, बल्कि एक दानव ने न्याय पूर्ण शासन किया है। धर्म का पालन किया है और विष्णु को भिक्षा दी है, इस प्रकार समस्त दानव वंश केलिए यश का भी तो कारण बन सकता है ?'' बलि चक्रवर्ती यों कह कर वामन के पास पहुँचे।

इसके बाद बलि चक्रवर्ती की पत्नी विंध्यावली स्वर्ण कलश में जल ले आई, स्वर्ण थाल में वामन के चरण धोये गये। उस जल को बलि ने अपने सर पर छिड़का लिये, तब बोले- ''हे वामन रूपधारी, आप के जैसे महान

व्यक्ति का मेरे पास दान के लिए पहुँचना मेरे पूर्व जन्म का फल है। आप जो कुछ चाहते हैं, मांग लीजिए। रत्न, स्वर्ण, महल, सुंदरियाँ, शस्य क्षेत्र, साम्राज्य-सर्वस्व यहाँ तक कि मेरा शरीर भी आप के वास्ते प्रस्तुत हैं ।"

"महाबलि, तुमने जो कुछ देना चाहा, उन को लेकर मैं क्या करूँगा ? मैं तो हिरण का चर्म बिछाये ब्रह्म निष्ठा करना चाहता हूँ। इस वास्ते मेरेलिए अपने बौने कदमों से तीन कदम की जगह पर्याप्त है । ये तीन क़दम तुम्हारे दिगंतों तक फैले साम्राज्य में अत्यंत अल्प मात्र है, फिर भी मेरे लिए यह तीनों लोकों के बराबर है ।" वामन ने कहा ।

"वे तीन क़दम ही ले लो ।" यों कह कर बलि ने अपने जल कलश के जल लुढ़काकर दान करना चाहा, पर उस में से जल न निकला । शुक्राचार्य ने सूक्ष्म रूप में जल कलश की सूंड में छिपे रहकर जल के गिरने से रोक रखा था। इस पर वामन ने दाभ का तिनका निकाल कर जल कलश की सूंड में घुसेड़ दिया । शुक्राचार्य अपनी एक आँख खोकर काना बन गया । इस पर वह हट गया, तब जलधारा बलि चक्रवर्ती के हाथों से निकल कर वामन की अंजुलि में गिर गई । दान-विधि के समाप्त होते ही बलि चक्रवर्ती ने कहा- "अब आप के अपने चरणों से माप कर तीन क़दम जमीन प्रप्त करना ही शेष रह गया है ।"

वामन ने झट इधर-उधर घूम कर विश्वरूप धारण किया, लंबे, चौड़े एवं ऊँचाई के साथ नीचे, मध्य व ऊपर- माने जाने वाले तीनों लोकों पर व्याप्त हो गये । एक डग से उन्होंने सारी पृथ्वी को माप लिया, त्रिविक्रम विष्णु के चरण की छाया में सारे भूतल पर पल भर केलिए गहन अंधकार छा गया । इसके बाद आकाश को माप लिया, उस वक्त सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र मण्डल आदि उनके चरण से चिपके हुए रेणुओं की भांति दिखाई दिये । तब ब्रह्मा ने अपने कमण्डलु के जल से विष्णु के चरणों का अभिषेक किया । विष्णु के चरण से फिसलने वाला जल आकाश गंगा का रूप धर कर स्वर्ग में मंदाकिनी के रूप में प्रवहित
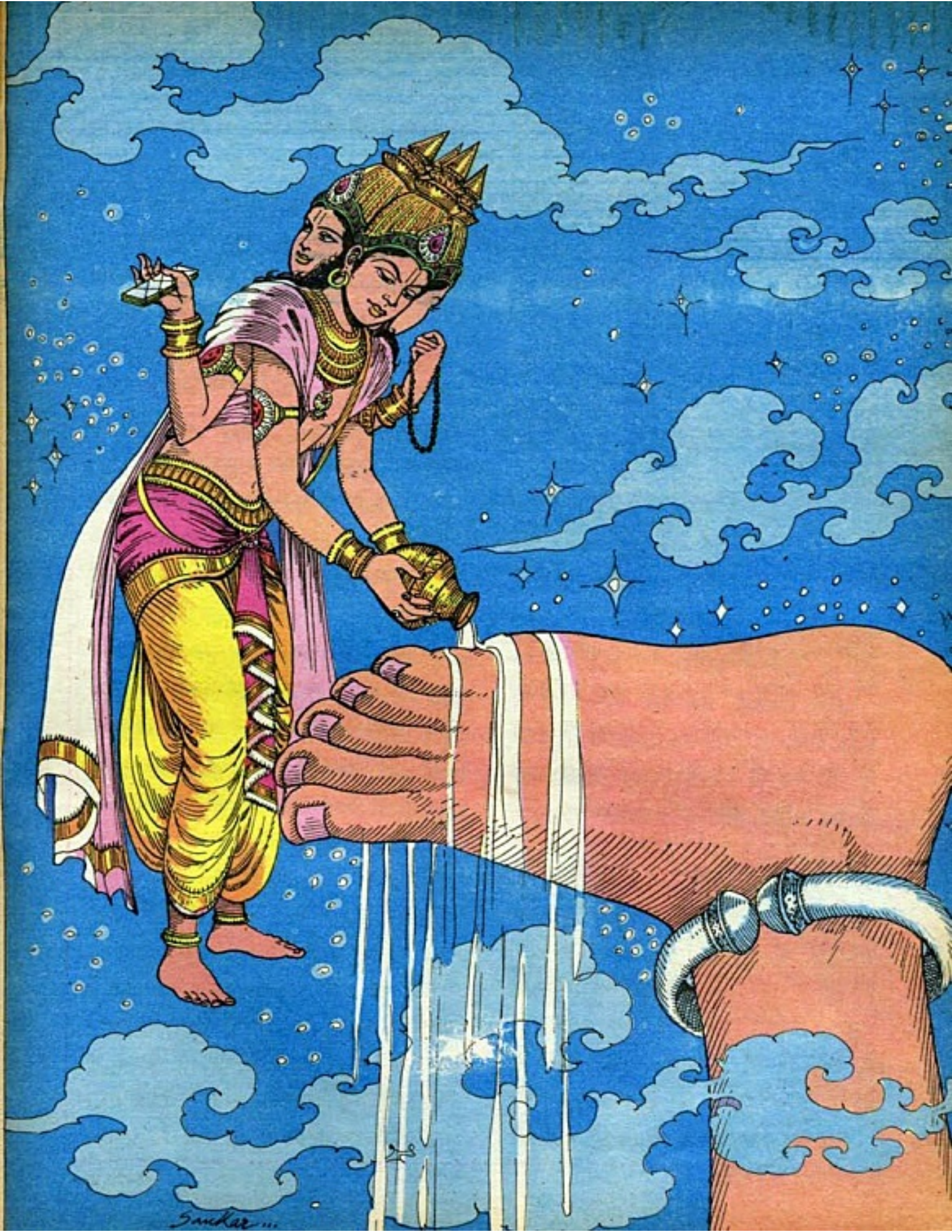
हुआ ।

वामनरूपी त्रिविक्रम ने बलि से पूछा- " हे बलि चक्रवर्ती, बताओ, मैं तीसरा कदम कहाँ रखूँ ?"

"है त्रिविक्रम, लीजिए यह मेरा सिर ! इसपर अपना चरण रखिये ।" यों कह कर बलि चक्रवर्ती ने अपना सर झुका लिया !

इस पर विष्णु ने अपने विश्वरूप को वापस ले लिया, फिर से वामन बनकर बलि के सर पर चरण रख कर बोले- "बलि, पृथ्वी तथा आकाश को पूर्ण रूप से मापनेवाला यह मेरा चरण तुम्हारे सर को पूर्ण रूप से माप नहीं पा रहा है !"

उस समय प्रह्लाद ने वहाँ पर प्रवेश कर कहा- "भगवन, मेरा पोता आपका शत्रु नहीं है, उस पर अनुग्रह कीजिए !"

बलि चक्रवर्ती की पत्नी विंध्यावली ने कहा- "वामनवर, मेरे पति का किसी भी प्रकार से अहित न हो । ऐसा अनुग्रह करना आप केलिए उचित होगा !"

"बहन, आप के पति केलिए हानि पहुँचाना किसी के लिए भी संभव नहीं है । इसलिए तो मैं ने याचक बनकर उन से दान लिया है । इनका धार्मिक बल ही कुछ ऐसा है । यों समझाकर वामन प्रह्लाद की ओर मुड़कर बोले- "जानते हो, बलि मेरेलिए कैसे प्रिय व्यक्ति हैं ?" यह कहते वामन विष्णु की संपूर्ण कलाओं के साथ शोभित हो लंबे वेत्र दण्ड समेत दिखाई दिये ।

"हे बलि चक्रवर्ती, तुम्हारी समता करने वाला आज तक कोई न हुआ और न होगा । आदर्शपूर्ण शासन करनेवाले चक्रवर्तियों में तुम्हारा ही नाम प्रथम होगा ! मैं तुम्हें सुतल में भेज रहा हूँ । पाताल लोकों के अधिपति बन कर शांति एवं सुख के साथ चिरंजीवी बनकर रहोगे । तुम्हारी पत्नी तथा तुम्हारा दादा प्रह्लाद भी तुम्हारे साथ होंगे । मैं तुम्हारे सुतल द्वार का इसी प्रकार दण्डपानी बनकर पहरा देते हुए तुम्हारा रक्षक बन कर रहूँगा ।" यों कह कर वामनावतार विष्णु अंतर्धान हो गये ।

शंकाओं का समाधान

किसी राजा के मन में एक विचार आया-कोई काम कब शुरू करना है ? किस की सलाह लेनी है ? किस उत्तम धर्म का आचरण करना है ? राजा ने अपने राज्य भर में इस बात का ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो व्यक्ति इन शंकाओं का समाधान करेगा, उसको बहुत बड़ा पुरस्कार दिया जाएगा ।

ढिंढोरा सुन कर कई मेधावी राजा के पास पहुँचे । कौन सा काम. कब शुरू करना है ! इस प्रश्न का समाधान अनेक लोगों ने कई प्रकार से दिया । किसी ने कहा — पंचांग देखने पर इसका पता चल जाएगा ! कुछ लोगों ने कहा कि काम के अनुरूप योग भी बदल जाते हैं, कुछ लोगों ने सलाह दी कि जरूरत. के मुताबिक़ आगे-पीछे काम शुरू करना चाहिए ।

किस की सलाह लेनी है ? इस प्रश्न के उत्तर में किसी ने कहा कि ंत्रियों की सलाह लेनी चाहिए । कुछ लोगों ने सामंतों की सलाह लेने का सुझाव दिया ।

उत्तम धर्म क्या है ? इसके समाधान में कुछ लोगों ने शास्त्रीय ज्ञान का अर्जन बताया । कुछ लोगों ने व्रत एवं धर्म का आचरण उत्तम मार्ग बताया । कुछ ने युद्ध कर्म करना सच्चा रास्ता माना ।

पर राजा को किसी का भी समाधान पसंद नहीं आया । उन्हें पता चला कि राजधानी के समीप ही एक वन में एक ऋषि रहते हैं और वे गूढ़ तत्वों के मर्मज्ञ है। "शायद वे हमारी शंकाओं का समाधान कर दें ।" ऐसा सोच कर राजा ने उनके पास जाने का निश्चय किया ।

लेकिन ऋषि अपने आश्रम को छोड़कर कहीं आते-जाते नहीं थे । आश्रम के अन्दर साधारण व्यक्तियों को ही प्रवेश करने देते हैं । इसलिए राजा साधारण वेष में कुछ परिजनों के

रूसी कहानी

साथ घोड़े पर आश्रम की ओर चल पड़े। आश्रम के बाहर ही घोड़े से उतर कर वे अकेले ही ऋषि की पर्णशाला की ओर बढ़े।

ऋषि पर्णशाला के प्रांगण में पौधों के वास्ते क्यारियाँ बना रहे थे। राजा का अभिवादन स्वीकार करके वे फिर से मिट्टी खोदने में डूब गये।

राजा ऋषि से बोले- "महात्मन, मैं तीन संदेहों का समाधान पाने केलिए आया हूँ। कोई काम कब शुरू करना है ? किन किन की सलाहें स्वीकार करनी हैं ? किस उत्तम धर्म का आचरण करना है ?"

ऋषि ने थोड़ी देर केलिए मिट्टी खोदना बंद किया, फिर अपने काम में निमग्न हो गये। राजा बोले- "महात्मा, आप विश्राम कीजिए ! मैं खोद डालूँगा।" इस पर ऋषि राजा के हाथ में कुदाल देकर जमीन पर बैठ गये।

राजा ने चार थाले खोद कर फिर से अपने संदेहों का समाधान मांगा। लेकिन महर्षि ने समाधान तो नहीं दिया, उल्टे उठकर राजा के हाथ से कुदाल लेने को हुए। पर राजा ने कुदाल ऋषि के हाथ नहीं दिया। सूर्यास्त तक राज़ा थाले खोदते रहे। काम पूरा हो गया। राजा कुदाल नीचे रखकर बोले- "महात्मा, मैं ने सुना है कि आप एक महान ज्ञानी हैं और मैं इसी विश्वास से आया हूँ कि आप मेरे संदेहों का निवारण करेंगे, कृपया यदि आप उनका समाधान नहीं जानते तो स्पष्ट बता दीजिए ! मैं अपने रास्ते चला जाऊँगा।"

"ऐसा मालूम होता है कि कोई इधर आ रहा है। उस से पूछ लें कि वह इधर क्यों आ रहा है।" महर्षि ने कहा।

राजा ने पीछे मुडकर देखा। वन के भीतर से आश्रम की ओर बढता हुआ एक व्यक्ति उन्हें दिखाई दिया। वह अपने हाथ से पेट दबाये हुए था। उसकी उंगलियों के बीच से खून बह रहा था। वह राजा के समीप पहुँचा और कराहते हुए नीचे लुढ़क पड़ा। राजा और महर्षि ने उसके कपडे हटा कर देखा। उस व्यक्ति के पेट पर

बहुत बड़ा घाव था। राजा ने घाव धोकर साफ किया, उसकी मरहम-पट्टी की। इसके बाद वह व्यक्ति होश में आया, और पीने केलिए कुछ मांगा। राजा ने कुटी के भीतर से उसे पानी लाकर दिया।

इतने में अंधेरा फैल गया। राजा ने महर्षि की मदद से उस घायल व्यक्ति को कुटी के अंदर पहुँचाया। राजा देहली पर सर टिका कर रात भर गाढ़ निद्रा में डूबे रहें।

सवेरे जैसे ही राजा नींद से जगे, वह व्यक्ति खाट पर से उतर आया और उनके चरण पकड़ कर बोला- "महाराज, मुझको क्षमा कर दीजिए।"

"लेकिन किसलिए? मैं नहीं जानता कि तुम कौन हो? और न तुमने मेरे प्रति कोई अपराध किया है।" राजा ने आश्चर्य से कहा।

"आप तो मुझे नहीं जानते, लेकिन मैं आप को जानता हूँ। आप ने कुछ दिन पूर्व मेरे बडे भाई को फाँसी दिला कर उनकी जमीन-जायदादें ज़ब्त कर ली थी। उस वक्त मैं ने यह शपथ ली थी कि आप की हत्या करके उसका प्रतिशोध लूँगा। मैं आप का शत्रु हूँ। मुझे जब मालूम हुआ कि आप महर्षि से मिलने आश्रम में आये हैं तब आश्रम से लौटते वक्त आप की हत्या करने केलिए मैं एक झाड़ी में छिपा रहा, पर बडी देर तक आप लौटे नहीं। इसलिए झाड़ी की ओट से बाहर आया और आप की खोज में चल पड़ा। इतने में आप के अंग रक्षकों ने मुझको पहचान लिया और मुझे घायल कर दिया। मैं किसी तरह उनके पंजे से बच निकला। यदि आप मेरे घाव को धोकर मरहम पट्टी न करते तो खून के बह जाने से मैं मर गया होता। दर असल मैं आप को मार डालना चाहता था पर उलटे आपने मेरे प्राण बचाये। यदि आप मुझे जिंदा रहने देंगे तो मैं और मेरे पुत्र जिंदगी भर आप के सेवक बनकर रहेंगे" उस व्यक्ति ने कहा।
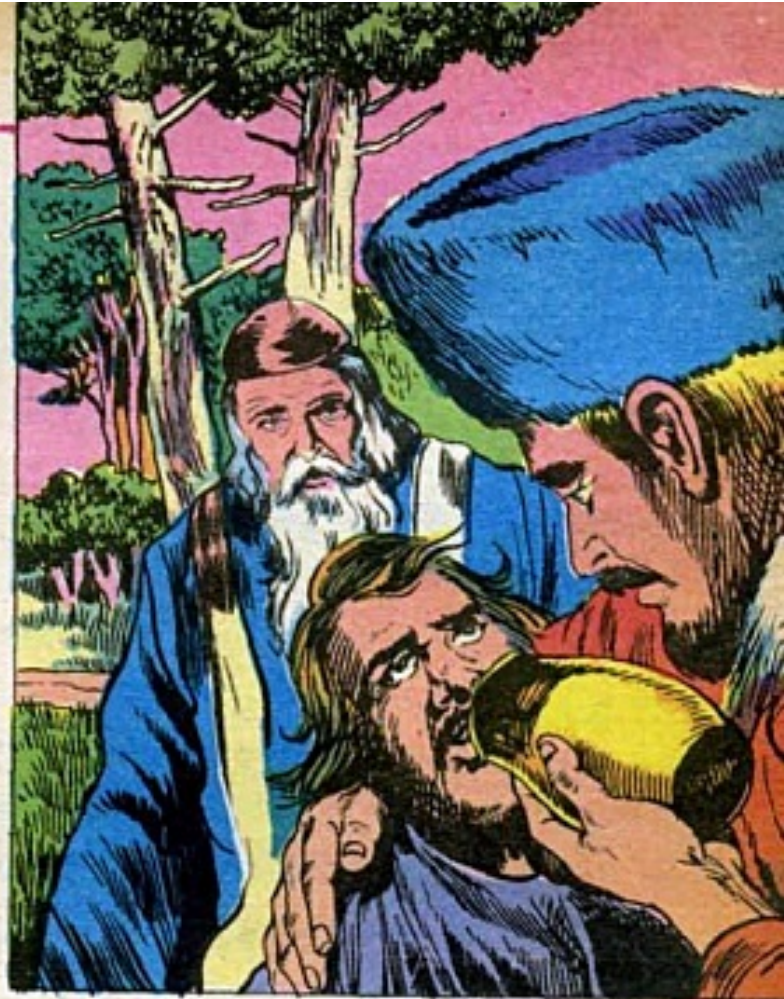
ऐसी सरलता से अपने शत्रु के साथ समझौता होने के कारण राजा बहुत खुश हुए।

राजा ने उसी वक्त उसे वचन दिया कि राज वैद्य के द्वारा उसका इलाज करवाया जाएगा और उसके बड़े भाई की जायदाद वापस कर दी जाएगी ।

राजा कुटी से बाहर निकले तो देखते क्या हैं, महर्षि थाले बना रहे हैं । राजा ने उनके समीप जाकर प्रणाम किया और पूछा- "महात्मा, आपने मेरी शंकाओं का समाधान नहीं किया ?"

महर्षि ने हँसकर कहा- "आपके सारे संदेहों का निवारण दो बार हो चुका है । क्या समझ नहीं पाये ? कल आप मेरी कमजोरी पर रहम खाकर थाले बनाते रहे । अगर उसी वक्त चले जाते तो आप को यह व्यक्ति मार डालता, इसलिए उस संदर्भ में महत्वपूर्ण समय आपके द्वारा थाला खोदे जाने का था । आप के लिए प्रधान व्यक्ति तब मैं था । उस समय मेरी मदद करना ही आप का प्रधान धर्म था । इसके बाद वह व्यक्ति दौड़ कर जब आया, तब प्रधान समय वह था जब आपने उसकी सेवा-शुश्रूषा की । उस संदर्भ में प्रधान व्यक्ति वह आगंतुक था, उसकी सहायता करना आपका प्रधान धर्म बन गया था । याद रखिए- प्रधान समय- "अभी इसी वक्त" है, क्यों कि उसी वक्त शक्ति हमारे अधीन रहती है । इसके बाद दूसरे पल में क्या होने वाला है, हम नहीं जानते । अब रही प्रधान व्यक्ति की बात । वह तो वही है जो आप के साथ रहता है, क्यों कि उस वक्त कोई यह नहीं कह सकता कि हमें किसी दूसरे व्यक्ति के साथ प्रयोजन है या नहीं । अब रही प्रधान धर्म की बात, प्रधान व्यक्ति की सहायता करना ही क्यों कि हम सब ने परोपकार के लिए ही मानव जीवन धारण किया है ।"

महर्षि के मुंह से ये समाधान पाकर राजा परमानंदित हुए और कृतज्ञ-भाव से ऋषि को प्रणाम करके अपने महल को लौट गये ।

मेहनत का बदला

शंभुदास इलाज केलिए अपने क्षेत्र में अपार यश प्राप्त कर चुके थे। एक दिन आधी रात के समय एक कोस की दूरी पर स्थित लायलपुर के जमीन्दार के यहाँ से ख़बर मिली कि उनके पिता बहुत ही अस्वस्थ हैं, इसलिए तुरंत चले आयें।

इस ख़बर को लाने वाले जमीन्दार के नौकर से शंभुदास ने पूछा- "यह तो अर्द्ध रात्रि का समय है, कुहरा छाया हुआ है, फिर भी कोई बात नहीं, लेकिन गाड़ी कहाँ है ?"

"ज़मीन्दार साहब घबराहट में थे। इसलिए गाड़ी भेजने की बात वे भूल गये। हमें पैदल जाना होगा।" नौकर ने जवाब दिया।

इस पर वैद्याचार्य शंभुदास ने एक बैल गाड़ी ठीक करवाई और लायलपुर केलिए रवाना हुए। रास्ते में गाड़ी का पहिया टूट गया। उस अंधेरी रात में जाडे की भी परवाह किये बिना यातनाएँ झेलते हुए शंभुदास पैदल चल कर जमीन्दार के घर पहुँचे। पर देखते क्या हैं ? जमीन्दार के पिता वैसे सख्त बीमार नहीं हैं। थोड़ा अस्वस्थ जरूर थे, खतरे की कोई बात न थी। शंभुदास ने जमीन्दार से कहा- "आप शीघ्र अपने सारे रिश्तेदारों को ख़बर कर दीजिए।"

जमीन्दार ने सोचा कि यदि खतरे की कोई बीमारी न होती तो शंभुदास यह सुझाव नहीं देते, इस विचार से जमीन्दार ने उसी वक्त पालकियाँ, मेना और घोड़ा गाड़ियाँ भेजकर चारों तरफ के अपने रिश्तेदारों को बुला भेजा।

शंभुदास ने दवा की एक पुडिया जमीन्दार के हाथ दी और वे दरवाज़े पर रखी एक पालकी में जा बैठे। जमीन्दार की समझ में नहीं आया कि उनके पिता की हालत ऐसी खतरनाक है तो वैद्य क्यों अपने घर चले जा रहे हैं, उन्होंने शंभुदास से पूछा- "मेरे पिताजी केलिए कोई ख़तरा तो नहीं है न ?"

"साहब, ऐसी कोई बात नहीं है। खतरा होता तो मैं क्यों चला जाता ? इस आधी रात के वक्त यहाँ तक पहुँचने में मैं ने कैसी तकलीफ़ उठाई, इसका परिचय कराने के लिए मैं ने आपके सारे रिश्तेदारों को बुलवा भेजा।" शंभुदास ने उत्तर दिया।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कर ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ सितम्बर १९८३ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

★

M. Natarajan A. Syed

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ जुलाई १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

मई के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : उपलब्धि में सुख है!

द्वितीय फोटो : इंतज़ार में दुख है!

प्रेषक : बीरा, १०-१०६/१, गोखले नगर, रामंतापुर, हैदराबाद-५०००९१.

पुरस्कार की राशि रु. ५० इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

सात समंदर पार मेरी नाव चली
लाल परी के गांव मेरी नाव चली
भर भर लाऊं जेम्स नाव में अपनी झटपट
लेना हो जो जेम्स किनारे से हटना मत
GEMS
कितना सुन्दर सपना...झट ले लो जॅम अपना!
कॅडबरिज़
चॉकलेट्स
कॅडबरिज़ जॅम्स हैं ही ऐसे; मीठे मीठे सपनों जैसे!

हुर्रे! हुर्रे!
ह है गोल्डस्पॉटिंग डे!
GOLD SPOT
Fun means Goldspotting
GOLD SPOT

'जब मैं बड़ा होऊँगा न,
कॉमिक्स ही पढूंगा,
और बिस्किट ही खाऊँगा...'
पारले
TARA
40¢
TOM AND JERRY
बच्चों को भाये पारले ग्लुको–
स्वाद में निराले, शक्ति से भरपूर
PARLE
Gluco
BISCUITS
पारले
ग्लुको
भारत के सबसे ज़्यादा बिकनेवाले बिस्किट
everest/82/PP/414-hn.